Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रिमझिम

(हास्यरस की अनुपम कहानियाँ)

Rimjhim

संग्रहकर्ता

श्री राजनारायण चतुर्वेदी "आज़ाद"

R.N. Ch. Azad

Sri Pratap Singh Library Srinagar.

प्राप्ति-स्थान

बंबई बुक डिपो

कलकत्ता

Bombay Book depot Calcutta

प्रथमावृत्ति] १९४० [मूल्य ।।।)

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रकाशक

कल्याणदास एण्ड, ब्रदर्स

१६४ हरिसन रोड

कलकत्ता

Acc: no: 12173

Rs 0-12-0

292

सर्वाधिकार संरक्षित

Sri Pratap Singh
Library
Srinagar.

मुद्रक

बजरंगबली 'विशारद'

श्री सीताराम प्रेस, जालिपादेवी, काशी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दो शब्द !

मुझे हिन्दी से प्रेम है। मैंने जीवन भर उर्दू के बाग़ से फूल चुन-चुनकर हिन्दी का श्रृंगार किया है। यही मेरा साहित्यिक उद्देश्य रहा है। आज भी उर्दू-हास्य-रसात्मक गल्पों को हिन्दी के रूप में हिन्दी-भाषा-भाषियों के सम्मुख उपस्थित कर रहा हूँ। हिन्दी में हास्यरस की कहानियों की कमी है। उर्दू का हास्य हिन्दी के अनुकूल होता है। इसलिये मैं यह दुःसाहस करने की हिमाक़त कर रहा हूँ। मेरे फूल रस-रूप-गन्ध में कहाँ तक पाठकों को रुचिकर होंगे यह निर्णय करना पाठकों का काम है, मेरा नहीं!

मैं अपने उन मुसलमान लेखकों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना अपना परम कर्त्तव्य समझता हूँ जिनकी कृतियाँ मैंने इसमें ली हैं। इसके साथ-साथ प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशक श्री कल्याणदास ऐण्ड ब्रदर्स का भी आभारी हूँ जिनकी कृपा से आज यह संग्रह सर्व-साधारण के समक्ष लाने का अवसर मिला है।

मेरी यह तुच्छ भेंट छोटी और साधारण होने पर भी मेरे लिये बड़े महत्व की है।

यदि आपने स्वीकार किया तो भविष्य में कुछ और भी पुष्प-संचित करके आपके चरणों पर चढ़ाऊँगा। आशा है..........!

संग्रहकर्त्ता—

राजनारायण चतुर्वेदी 'आज़ाद'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कौन—किसकी है

✓१ उसकी याद में—ले० एम. एस. बुखारी एम. ए. १
✓२ चीनी की अँगूठी—मिर्ज़ा अज़ीम बेग़ चुग़ताई २६
३ केले का छिलका—सिन्दबाद जहाज़ी ... ४२
✓४ जी हाँ पिटे हैं—शौकत थानवी ५५
✓५ बुरे फँसे—हाजी लक़लक़ ६५
×६ वह रूठ गईं—"पतरस" एम. ए. ७२
७ साड़ी और सूट—"फ़लक़ पैमा" ८५
८ मार्च में बुलबुल हूँ मैं जुलाई में परवाना हूँ—
"असमत चुग़ताई" ... ९२
× ९ हम भी उम्मीदवार थे १०६
१० तहसीलदार साहब "आज़ाद" ... १२१

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उसकी याद में

एक दिन मिर्जा साहब और मैं बरामदे में साथ-साथ कुर्सियाँ डाले चुपचाप बैठे थे। जब दोस्ती बहुत पुरानी हो जाय, तो बात-चीत की खास जरूरत नहीं रह जाती और दो दोस्त एक-दूसरे की खामोशी से भी आपस में मजे ले सकते हैं। यही हालत हमारी थी। हम दोनों अपने-अपने खयालात में डूबे हुए थे। मिर्जा साहब तो खुदा जाने क्या सोच रहे थे, लेकिन मैं जमाने की रङ्गीनियों पर गौर कर रहा था। दूर सड़क पर थोड़ी-थोड़ी देर के बाद एक-न-एक मोटरकार गुजर जाती थी। मेरी तबीयत कुछ ऐसी मिली है कि जब कभी मैं किसी की मोटरकार को देखूँ, मुझे जमाने की रङ्गीनियों का खयाल जरूर सताने लगता है। और मैं कोई ऐसी तरकीब सोचने लगता हूँ, जिससे दुनिया की तमाम दौलत सब आदमियों में बराबर बाँट दी जाय। अगर मैं सड़क पर पैदल जा रहा हूँ और कोई मोटरकार इस अदा से

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गुजर जाय कि रास्ते की सारी गर्द उड़कर मेरे फेफड़ों, मेरे दिमाग, मेरे मेदे और मेरी तिल्ली तक पहुँच जाय, तो उस दिन मैं घबराकर इल्मे कीमिया की वह किताब निकाल लेता हूँ, जो मैंने एफ० ए० में पढ़ी थी और इस गरज से उसका अध्ययन करने लगता हूँ कि शायद बम बनाने का कोई नुस्ख़ा हाथ आ जाय।

मैं कुछ देर आहें भरता रहा। मिर्जा साहब ने कुछ ध्यान न दिया। आखिर मैंने खामोशी को तोड़ा और मिर्जा साहब से कहा—मिर्जा, हममें और जानवरों में क्या फर्क है ?

मैं—मैं बताऊँ तुम्हें ?

मिर्जा—बोलो !

मैं—कोई फर्क नहीं। सुनते हो मिर्जा ? कोई फर्क नहीं हममें और जानवरों में ·········कम-से-कम मुझमें और जानवरों में—कोई फर्क नहीं। हाँ-हाँ, मैं जानता हूँ, तुम नुकताचीनी करने में बड़े तेज हो। कह दोगे कि जानवर जुगाली करते हैं, तुम जुगाली नहीं करते। उनके दुम होती है, तुम्हारे दुम नहीं। लेकिन इन बातों से क्या बनता-बिगड़ता है। इनसे तो सिर्फ यही जाहिर होता है कि वह मुझसे बढ़े-चढ़े हैं। लेकिन इस बात में मैं और वह बिलकुल बराबर हैं। वह भी पैदल चलते हैं, मैं भी पैदल चलता हूँ। इसका तुम्हारे पास क्या जवाब है ? जवाब नहीं। कुछ है, तो कहो। बस, चुप हो जाओ। तुम कुछ नहीं कह सकते जब से मैं पैदा हुआ हूँ, उस दिन से पैदल चल रहा हूँ—पैदल ! तुम पैदल के माने नहीं जानते। पैदल के माने हैं जमीन की छाती

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर इस तरह से हरकत करना कि दोनों पाँवों में से एक जरूर जमीन पर रहे। याने तमाम उम्र मेरे हरकत करने का तरीका यही रहा है कि एक पाँव जमीन पर रखता हूँ, दूसरा उठाता हूँ। दूसरा रखता हूँ पहला उठाता हूँ। एक आगे, एक पीछे—एक पीछे, एक आगे! खुदा की कसम, इस तरह की जिन्दगी से दिमाग सोचने के काबिल ही नहीं रहता। हवास बेकार हो जाते हैं, भावनायें मर जाती हैं और आदमी गधे से बदतर हो जाता है!

मिर्जा साहब मेरे इस लेक्चर के बीच में कुछ इस बेपरवाही के साथ सिगरेट पीते रहे कि दोस्तों की बेवफाई पर रोने को जी चाहता था। मैंने बेहद हिकारत और नफरत के साथ मुँह उनकी तरफ से फेर लिया। ऐसा मालूम होता था कि मिर्जा को मेरी बातों पर यकीन ही नहीं आता। गोया मैं जो अपने खयालात जाहिर कर रहा हूँ, वे खयाली ही हैं। याने मेरा पैदल चलने के खिलाफ शिकायत करना काबिले गौर नहीं है। याने मुझे किसी सवारी का हक ही नहीं। मैंने दिल में कहा—अच्छा मिर्जा, यों ही सही, देखो तो मैं क्या करता हूँ।

मैंने अपने दाँत भींच लिये और कुर्सी के दोनों हाथों पर से झुककर मिर्जा के करीब पहुँच गया। मिर्जा ने भी सर मेरी तरफ मोड़ा। मैं मुसकरा दिया, लेकिन मेरी मुसकराहट में जहर मिला हुआ था। जब मिर्जा सुनने के लिए बिलकुल तैयार हो गये, तो मैंने चबा-चबाकर कहा:—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"मिर्जा, मैं एक मोटरकार खरीदने लगा हूँ।"

यह कहकर मैं बड़ी बेफिक्री के साथ दूसरी तरफ देखने लगा मिर्जा बोले—क्या कहा तुमने ? क्या खरीदने लगे हो ?

मैंने कहा—सुना नहीं तुमने ! मैं एक मोटरकार खरीदने लगा हूँ। मोटरकार एक ऐसी गाड़ी है, जिसे कुछ लोग मोटर कहते हैं। कुछ लोग कार कहते हैं। लेकिन चूँकि तुम जरा कुन्द जिहन हो, इसलिए मैंने दोनों लफ्ज एक साथ इस्तेमाल कर दिये, ताकि तुम्हें समझने में कोई दिक्कत न पेश आये।

मिर्जा बोले—"हूँ।"

अबकी मिर्जा नहीं, बल्कि मैं बेपरवाही से सिगरेट पीने लगा। भवें मैंने ऊपर को उठा लीं। सिगरेटवाला हाथ मैं मुँह तक इस अन्दाज से लाता और हटाता था कि बड़े-बड़े ऐक्टर उसपर ईर्ष्या करें।

थोड़ी देर के बाद मिर्जा फिर बोले—"हूँ।"

मैंने सोचा, असर हो रहा है। मिर्जा साहब पर रोब पड़ रहा है। मैं चाहता था, मिर्जा कुछ बोले, ताकि मुझे मालूम हो कि कहाँ तक प्रभावित हुए है। लेकिन मिर्जा ने फिर कहा—"हूँ।"

मैंने कहा—"मिर्जा, जहाँ तक मुझे मालूम है, तुमने स्कूल, कालेज और घर पर दो-तीन जबानें सीखी हैं। और इसके अलावा तुम्हें कई ऐसे शब्द भी आते हैं, जो किसी स्कूल या कालेज या शरीफ घराने में नहीं बोले जाते। फिर भी, इस वक्त तुम्हारा कलाम 'हूँ' से आगे नहीं बढ़ता। तुम जलते हो मिर्जा,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इस वक्त तुम जो कुछ सोच रहे हो, उसे अरबी जबान में हसद कहते हैं।"

मिर्जा साहब कहने लगे—"नहीं, यह बात नहीं है। मैं तो सिर्फ खरीदने के लफ्ज पर गौर कर रहा था। तुमने कहा, मैं एक मोटरकार खरीदने लगा हूँ। तो मियाँ साहबजादे, खरीदना एक ऐसा काम है कि उसके लिये रुपये वगैरह की जरूरत होती है। वगैरह का बन्दोबस्त तो बखूबी हो जायगा, लेकिन रुपये का क्या बन्दोबस्त करोगे ?"

यह अड़चन तो मुझे सूझी हो न थी। लेकिन मैंने हिम्मत न हारी। मैंने कहा—"मैं अपनी कई कीमती चीजें बेच सकता हूँ।"

मिर्जा बोले—"कौन-सी, मसलन् ?"

मैंने कहा—"एक तो अपना सिगरेट केस बेच डालूँगा।"

मिर्जा कहने लगे—"चलो, दस आने तो यह हो गये। बाकी ढाई-तीन हजार का इन्तजाम भी इसी तरह हो जाय, तो सब काम ठीक हो जायगा।"

उसके बाद जरूरी यही मालूम हुआ कि गुफ्तगू का सिलसिला कुछ देर के लिये रोक दिया जाय। चुनाञ्चे मैं मिर्जा से बेजार होकर खामोश हो रहा। यह बात समझ में न आई कि लोग रुपया कहाँ से लाते हैं। बहुत सोचा, आखिर इस नतीजे पर पहुँचा कि लोग चोरी करते हैं। इससे कुछ इतमीनान भी हुआ।

मिर्जा बोले—"मैं तुम्हें एक तरकीब बताऊँ। एक बाइसिकल ले लो।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैंने कहा—"वह रुपये का सवाल तो फिर भी ज्यों-का-त्यों रहा।"

कहने लगे—"मुफ्त।"

मैंने हैरान होकर पूछा—"मुफ्त ! वह कैसे ?"

कहने लगे—मुफ्त ही समझो। आखिर दोस्त से कीमत लेना भी कहाँ की शराफत है। अलबत्ता तुम्हें अगर अहसान कबूल करना गवारा न हो, तो और बात है।"

ऐसे मौके पर जो हँसी मैं हँसता हूँ, उसमें एक मासूम बच्चे की खुशी, जवानी की खुशदिली, उबलते हुए फव्वारों का सङ्गीत और बुलबुलों का नगमा सब एक-दूसरों के साथ मिले होते हैं। चुनाञ्चे मैं यह हँसी हँसा और इस तरह हँसा कि खिली हुई बाछें फिर घण्टों तक अपनी असली जगह पर वापस न आईं। जब मुझे यकीन हो गया कि एकदम से कोई खुशखबरी सुनने से दिल की हरकत बन्द हो जाने का जो खतरा हो जाता है, उससे बचा हुआ हूँ, तो मैंने पूछा—'है किसकी ?'

मिर्जा बोले—"मेरे पास एक बाइसिकल पड़ी है, तुम ले लो !"

मैंने कहा—"फिर कहना, फिर कहना।"

कहने लगे—"भाई, एक बाइसिकल मेरे पास है, जब मेरी है, तो तुम्हारी ही है, तुम ले लो।"

यकीन मानिये, मुझपर घड़ों पानी पड़ गया। शर्म के मारे पसीना-पसीना हो गया। चौदहवीं सदी में ऐसी बेगरजी और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उदारता भला कहाँ देखने में आती है। मैंने कुर्सी सरका कर मिर्जा के पास कर ली। समझ में न आया कि उनके इस अहसान का शुक्रिया किस तरह अदा करूँ!

मैंने कहा—मिर्जा, सबसे पहले तो मैं इस गुस्ताखी और बेअ-दबी की माफी माँगता हूँ, जो अभी मैंने तुम्हारे साथ बातचीत में बरती है। दूसरे, मैं उम्मेद करता हूँ कि तुम मेरी साफगोई की दाद दोगे और मुझे अपनी रहमदिली के सदके में माफ कर दोगे मैं हमेशा तुमको निहायत खुदगरज, मक्कार और कमीना समझता रहा हूँ। देखो, नाराज मत होना। इन्सान से गलती हो ही जाती है। लेकिन आज तुमने अपनी शराफत और दोस्ती का सबूत दिया है और मुझपर साबित कर दिया है कि मैं कितना काबिले नफरत, ओछा और तङ्ग-खयाल का नीच आदमी हूँ। लिल्लाह, मुझे माफ कर दो।

मेरी आँखों में आँसू भर आये और करीब था कि मैं मिर्जा के हाथ का बोसा लेता और अपने आँसुओं को छिपाने के लिये उसकी गोद में सर रख देता; लेकिन मिर्जा साहब कहने लगे:—

"वाह, इसमें मेरी उदारता क्या होती? मेरे पास एक बाइ-सिकल है, जैसे मैं सवार हुआ, वैसे तुम सवार हुए।"

मैंने कहा—"मिर्जा, मुफ्त में न लूँगा। यह हर्गिज नहीं हो सकता।"

मिर्जा कहने लगे—"बस, मैं इसी बात से डरता था। मैं जानता था कि तुम किसी का अहसान लेना गवारा न करोगे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हालाँ कि खुदा गवाह है, अहसान इसमें कोई नहीं।"

मैंने कहा—"खैर, कुछ भी सही। तुम सचमुच मुझे उसकी कीमत बता दो।"

मिर्जा बोले—"कीमत का जिक्र करके तुम गोया मुझे काँटों में घसीटते हो और जिस कीमत पर मैंने खरीदी थी, वह तो बहुत ज्यादा थी। और अब तो वह इतने की रही भी नहीं।"

मैंने पूछा—"तुमने कितने में खरीदी है ?"

कहने लगे—"मैंने पौने दो सौ में ली थी, लेकिन उस जमाने में बाइसिकलों का रिवाज जरा कम था। इसलिये कीमतें जरा ज्यादा थीं।"

मैंने कहा—"क्या बहुत पुरानी है ?"

बोले—"ऐसी पुरानी भी क्या होती। मेरा लड़का उसपर कालेज आया-जाया करता था। और उसे कालेज छोड़े अभी दो साल भी नहीं हुए। लेकिन इतना जरूर है कि आजकल की बाइ-सिकलों से जरा मुखतलिफ है। आजकल तो बाइसिकलें टीन की बनती हैं, जिन्हें कालेज के सर-फिरे लौंडे सस्ती समझकर खरीद लेते हैं। पुरानी बाइसिकलों के ढाँचे मजबूत हुआ करते थे।"

"मगर मिर्जा, पौने दो सौ तो मैं हर्गिज नहीं दे सकता। इतने रुपये मेरे पास कहाँ से आये, मैं तो इससे आधी कीमत भी नहीं दे सकता।"

मिर्जा कहने लगे—"तो मैं तुमसे पूरी कीमत थोड़े ही माँगता हूँ। अव्वल तो मैं कीमत लेना ही नहीं चाहता। लेकिन......।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैंने कहा—"न मिर्ज़ा, कीमत तो तुम्हें लेनी ही पड़ेगी। अच्छा, तुम यों करो। मैं तुम्हारी जेब में कुछ रुपये डाले देता हूँ। तुम घर जाकर गिन लेना। अगर तुम्हें मंजूर हुए, तो कल बाइसिकल भेज देना। वरना रुपये वापस कर देना। अब यहाँ बैठकर मैं तुमसे सौदा चुकाऊँ? यह तो कुछ दूकानदारों की-सी बात मालूम होती है।"

मिर्ज़ा बोले—"भाई, जैसी तुम्हारी मर्ज़ी, मैं तो अब भी यही कहता हूँ कि कीमत-वीमत जाने दो, लेकिन मैं जानता हूँ कि तुम न मानोगे।"

मैं उठकर अन्दर कमरे में आया। मैंने सोचा, इस्तेमाल की हुई चीज को लोग आम तौरपर आधी कीमत देते हैं, लेकिन जब मैंने मिर्ज़ा से कहा था कि मिर्ज़ा, मैं तो आधी कीमत भी नहीं दे सकता, तो उसने इसपर इनकार भी नहीं किया था। वह बेचारा तो बल्कि यही कहता रहा कि तुम मुफ्त ही ले लो। लेकिन मुफ्त मैं कैसे ले लूँ। आखिर बाइसिकल है, एक सवारी है। फिटनों और घोड़ों, मोटरों और ताँगे के मुकाबले में शुमार की जाती है। बक्स को खोला, तो मालूम हुआ कि कुल ४६) रुपये हैं। ४६) तो कुछ ठीक रकम नहीं। ४५) या ५०) हों, जब भी बात है। ५०) तो हो नहीं सकते और अगर ४६) देते हैं, तो ४०) क्यों न दिये जाँय जिन रकमों के आखीर में सिफर आता है, वह रकमें कुछ ज्यादा माकूल मालूम होती हैं। बस, ठीक है। ४०) दे दूँगा। खुदा करे, मिर्ज़ा कबूल कर ले।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाहर आया। ४०) मुट्ठी में बन्द करके मैंने मिर्जा की जेब में डाल दिये और कहा—' मिर्जा, इसको कीमत न समझना। लेकिन अगर एक मुफलिस दोस्त की हकीर-सी रकम मन्जूर करना तुम्हें अपनी तौहीन न मालूम हो, तो कल बाइसिकल भेजवा देना।"

मिर्जा चलने लगे, तो मैंने फिर कहा कि मिर्जा, कल जरूर सुबह-सुबह ही भेजवा देना। रुखसत होने से पहले मैंने फिर एक दफा कहा—"कल सुबह आठ-नौ बजे तक पहुँच जाय। देर न करना······खुदा हाफिज······और देखो मिर्जा, मेरे थोड़े-से रुपयों को भी ज्यादा समझना······खुदा हाफिज······और तुम्हारा बहुत-बहुत शुक्रिया, मैं तुम्हारा अहसानमन्द हूँ। और मेरी गुस्ताखी को माफ कर देना। देखो न कभी-कभी यों ही बेतकल्लुफी में······कल सुबह आठ-नौ बजे तक······जरूर······ खुदा हाफिज!"

मिर्जा कहने लगे—"जरा इसको झाड़-पोंछ लेना और तेल वगैरह डलवा लेना। मेरे नौकर को फुरसत हुई, तो मैं खुद ही डलवा दूँगा। वरना तुम खुद डलवा लेना।"

मैंने कहा—"हाँ, हाँ, वह सब कुछ हो जायगा। तुम कल भेज जरूर देना। और देखना, आठ बजे तक या साढ़े सात बजे तक जरूर पहुँच जाय। अच्छा···खुदा हाफिज!"

रात को बिस्तर पर लेटा, तो बाइसिकल पर सैर करने के तरह-तरह के प्रोग्राम बनाता रहा। यह इरादा तो पक्का कर लिया कि दो-तीन दिन के अन्दर-अन्दर आस-पास के तमाम मशहूर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ऐतिहासिक खंडहर और इमारतों को नये सिरे से देख डालूँगा। इसके बाद अगले गरमी के मौसिम में हो सका, तो बाइसिकल पर कश्मीर वगैरह की सैर करूँगा। सुबह-सुबह हवा खाने के लिए हर रोज नहर तक जाया करूँगा। शाम को ठण्ढी सड़क पर जहाँ और लोग सैर को निकलेंगे, मैं भी सड़क की साफ जमीन पर हलके-हलके खामोशी के साथ हाथी-दाँत के एक गेंद की तरह गुजर जाऊँगा। डूबते हुए सूरज की रोशनी बाइसिकल के चमकीले हिस्सों पर पड़ेगी, तो बाइसिकल जगमगा उठेगी और ऐसा मालूम होगा, जैसे एक राजहंस जमीन के साथ-साथ उड़ रहा है। वह मुसकराहट, जिसका मैं ऊपर ज़िक्र कर चुका हूँ, अभी तक मेरे होठों पर खेल रही थी। दिल चाहता था कि अभी भाग कर जाऊँ और इसी वक्त मिर्जा को गले लगा लूँ।

रात को सपने में दुआयें माँगता रहा कि खुदा करे, मिर्जा बाइसिकल देने पर राजी हो जाय।

सुबह उठा, तो उठने के साथ ही नौकर ने यह खुशखबरी सुनायी कि हुजूर, वह बाइसिकल आ गयी है।

मैंने कहा—"इतने सबेरे !"

नौकर ने कहा—"वह तो रात ही को आ गयी थी। आप सो गये थे, मैंने जगाना मुनासिब न समझा। और साथ ही मिर्जा साहब का आदमी यह ढिबरियाँ कसने का एक औजार भी दे गया है।"

मैं हैरान तो हुआ कि मिर्जा साहब ने साइकिल भेजवा देने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में इस कदर जल्दी से क्यों काम लिया। लेकिन इस नतीजे पर पहुँचा कि आदमी निहायत शरीफ और ईमानदार हैं। रुपये ले लिये थे, तो साइकिल क्यों रोक रखते।

नौकर से कहा—देखो, यह औजार यहीं छोड़ जाओ, और देखो, बाइसिकल को किसी कपड़े से खूब अच्छी तरह झाड़ो और यह मोड़ पर जो साइकल वाला बैठता है, उससे जाकर बाइसिकल में डालने का तेल ले आओ और देखो—अबे भागा कहाँ जा रहा है! हम जरूरी बात तुमसे कह रहे हैं। बाइसिकल वाले से तेल की एक कुप्पी भी ले आना। और जहाँ-जहाँ तेल देने की जगह है, वहाँ तेल दे देना और उससे कहना कि कोई घटिया-सा तेल न दे दे, जिससे तमाम पुरजे ही खराब हो जायँ। बाइसिकल के पुरजे बड़े नाजुक होते हैं। और बाइसिकल बाहर निकाल रखो। हम अभी कपड़े पहन के आते हैं। हम जरा सैर को जा रहे हैं और देखो, साफ कर देना और बहुत जोर-जोर से कपड़ा भी मत रगड़ना; बाइसिकल का पालिश घिस जाता है।"

जल्दी-जल्दी चाय पी—गुसलखाने में चल-फिर कर "चल-चल चंबेली बाग में" गाता रहा। इसके बाद कपड़े बदले, औजार को जेब में डाला और कमरे से बाहर निकला।

बरामदे में आया, तो बरामदे के साथ ही एक अजीबो गरीब मशीन दिखाई दी। ठीक तरह पहचान न सका कि क्या चीज है! नौकर से दरियाफ्त किया—"क्यों बे, यह क्या चीज है?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नौकर बोला—"हुजूर, यह बाइसिकल है।"

मैंने कहा—"बाइसिकल ? किसकी बाइसिकल ?"

कहने लगा—"मिर्जा साहब ने भेजवायी है। आपके लिए।"

मैंने कहा—"और जो बाइसिकल रात को उन्होंने भेजी थी वह कहाँ गयी ?"

कहने लगा—"यही तो है।"

मैंने कहा—"क्या बकता है। जो बाइसिकल मिर्जा साहब ने कल रात को भेजी थी, वह बाइसिकल यही है ?"

कहने लगा—"जी हाँ।"

मैंने कहा—"अच्छा" और फिर उसे देखने लगा। पूछा, "इसको साफ क्यों नहीं किया ?"

"हुजूर दो-तीन दफा साफ किया है।"

"तो यह मैली क्यों है ?"

नौकर ने इसका जवाब देना शायद मुनासिब न समझा।

"और तेल लाया ?"

"हाँ हुजूर, लाया हूँ।"

"दिया ?"

"हुजूर, वह जो तेल देने के छेद होते हैं, वह नहीं मिलते।"

"क्या वजह ?"

"हुजूर, धुरों पर मैल और जङ्ग जमा है। वह सूराख कहीं बीच ही में दब-दबा गये हैं।"

धीरे-धीरे मैं उस चीज के पास आया, जिसे मेरा नौकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाइसिकल बता रहा था। उसके अजीबोगरीब पुरजों पर गौर किया, तो इतना तो साबित हो गया कि बाइसिकल है; लेकिन उसकी मशीन और ढाँचे को देख कर मुझे यकीन कर लेना पड़ा कि यह बाइसिकल (?) हल, चरखा और रहट के बनने के पहले तैयार की गयी है। पहिये को घुमा-घुमा कर वह सूराख तलाश किया, जहाँ किसी जमाने में तेल दिया जाता रहा होगा। लेकिन अब उस सूराख में से आमदोरफ्त का सिलसिला बन्द था। चुनाञ्चे नौकर बोला—"हुजूर, वह तेल तो सब इधर-उधर वह जाता है, बीच में तो जाता ही नहीं।"

मैंने कहा—"अच्छा, ऊपर ही ऊपर डाल दो, यह भी फायदेमन्द होता है।"

आखिरकार बाइसिकल पर सवार हुआ। पहला ही पाँव चलाया, तो ऐसा मालूम हुआ, जैसे कोई मुर्दा अपनी हड्डियाँ चटखा-चटखा कर अपनी मर्जी के खिलाफ जिन्दा हो रहा है। घर से निकलते ही कुछ थोड़ी-सी उतराई थी, उस पर बाइसिकल खुद-बखुद चलने लगी, लेकिन इस रफ्तार से, जैसे तारकोल जमीन पर बहता है। और साथ ही भिन्न-भिन्न हिस्सों से तरह-तरह की आवाजें निकलनी शुरू हुईं। उन आवाजों के भिन्न-भिन्न गिरोह थे। "चीं चाँ चूँ" की आवाज ज्यादातर गद्दी के नीचे और पिछले पहिये से निकलती थी, "खट खड़-खड़ खड़ड़" की आवाज मडगार्डों से आती थी, "चर चर्रख चर चर्रख" की सुरीली आवाज जञ्जीर और पैडल से बरामद हो रही थी। जञ्जीर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ढीली थी। मैं जब कभी पैडल पर जोर डालता था, जञ्जीर में एक अँगड़ाई-सी पैदा होती थी, जिससे वह तन जाती थी और "चड़-चड़" बोलने लगती थी। और फिर ढीली हो जाती थी। पिछला पहिया घूमने के अलावा जरा झूमता भी था, याने एक तो आगे को चलता था और उसके अलावा दाहने से बायें और बायें से दाहने को भी हरकत करता था। चुनाञ्चे सड़क पर जो निशान पड़ता जाता था, उसको देख कर ऐसा मालूम होता था, जैसे कोई मस्त साँप लहराता हुआ निकल गया है। मडगार्ड थे तो सही, लेकिन पहियों के ठीक ऊपर न थे। उनका फायदा सिर्फ यह मालूम होता था कि इन्सान पूरब की ओर सैर करने को निकले और सूरज पश्चिम में डूब रहा हो, तो मडगार्डों की बदौलत टायर धूप से बचे रहेंगे। अगले पहिये के टायर में एक बड़ा-सा पेवन्द लगा हुआ था, जिसकी वजह से पहिये के हर चक्कर में एक दफा दम-भर के लिए जोर से ऊपर उठ जाता था और मेरा सर पीछे को यों झटके खा रहा था, जैसे कोई लगातार ठोढ़ी के नीचे मुक्के मारे जा रहा हो। पिछले और अगले पहिये को मिला कर "चूँ चूँ फट"—"चूँ चूँ फट"—"चूँ चूँ फट"·········की आवाज निकल रही थी। जब उतराई पर बाइसिकल जरा तेज हुई, तो मानो एक भूचाल सा आ गया और बाइसिकल के कई और पुरजे, जो अब तक सोये हुए थे, बेदार होकर बोलने लगे। इधर-उधर के लोग चौंके। माताओं ने अपने बच्चों को सीने से लगा लिया। खरड़-खरड़-खरड़ के बीच में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पहियों की आवाज अलग सुनाई दे रही थी, लेकिन चूँकि बाइसिकल अब पहले से तेज थी, इसलिए "चूँ चूँ फट......... चूँ चूँ फट"........की आवाज ने अब "चूँ चूँ फट......... चूँ चूँ फट" की सूरत अख्तियार कर ली थी। तमाम बाइसिकल किसी अफ्रीकी जबान में बोल रही थी।

इस कदर की तेज चाल बाइसिकल के नाजुक मिजाज पर गिराँ गुजरी। चुनाञ्चे उसमें एकदम से दो तबदीलियाँ पैदा हो गयीं। एक तो हैण्डिल एक तरफ को मुड़ गया, जिसका नतीजा यह हुआ कि मैं जा तो सामने को रहा था, लेकिन मेरा तमाम जिस्म दायीं तरफ को मुड़ा हुआ था। इसके अलावा बाइसिकल की गद्दी एकाएक छः इञ्च के करीब नीचे बैठ गयी। चुनाञ्चे जब पैडल चलाने के लिए मैं टाँगे ऊपर-नीचे कर रहा था, तो मेरे घुटने मेरी ठोढ़ी तक पहुँच जाते थे। कमर दोहरी होकर बाहर को निकली हुई थी और साथ ही अगले पहिये की अठखेलियों की वजह से सब बराबर झटके खा रहा था।

गद्दी का नीचा हो जाना बेहद तकलीफ देने लगा। इसलिए मैंने मुनासिब यही समझा कि उसको ठीक कर लूँ। चुनाञ्चे मैं बाइसिकल को ठहरा कर नीचे उतरा। बाइसिकल के ठहर जाने से एकदम से जैसे दुनिया में खामोशी-सी छा गई। ऐसा मालूम हुआ, जैसे मैं किसी रेल के स्टेशन से निकल कर बाहर आ गया हूँ। जेब से मैंने औजार निकाला। गद्दी को ऊँचा किया। कुछ हैण्डिल को ठीक किया और दोबारा सवार हो गया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दस कदम भी न चलने पाया था कि अबके हैण्डल झक से नीचा हो गया। इतना कि गद्दी अब हैण्डल से कोई फुट-भर ऊँची थी। मेरा तमाम जिस्म आगे को झुका हुआ था। तमाम बोझ दोनों हाथों पर था, जो हैण्डल पर रखे थे और बराबर झटके खा रहे थे। अब जरा आप मेरी हालत की कल्पना करें, तो आपको खुद मालूम हो जायगा कि मैं दूर से ऐसा मालूम हो रहा था, जैसे कोई औरत आटा गूँध रही हो। मुझे इस उपमा का बड़ा तेज अनुभव था, जिसकी वजह से मेरे माथे पर पसीना छूट आया। मैं दायें-बायें लोगों को कनखियों से देखता जाता था। यों तो हर शख्स मील-भर पहले ही से मुड़-मुड़कर देखने लगता था, लेकिन उनमें कोई भी ऐसा न था, जिसके लिए मेरी मुसीबत मजाक का कारण न बन गई हो।

हैण्डल तो नीचा हो ही गया था। थोड़ी देर के बाद गद्दी भी फिर नीची हो गयी और मैं मय शरीर के जमीन के पास पहुँच गया। एक लड़के ने कहा—"देखो, यह आदमी क्या कर रहा है?" गोया उस बदतमीज के नजदीक मैं कोई करतब दिखा रहा था। मैंने उतरकर फिर हैण्डल और गद्दी को ऊँचा किया।

लेकिन थोड़ी देर के बाद उनमें से एक-न-एक फिर नीचा हो जाता। मैं यही सोचता रहता कि अब के गद्दी पहले बैठेगी या हैण्डल? चुनाञ्चे निडर होकर न बैठता, बल्कि जिस्म को गद्दी से जरा ऊपर ही रखता। लेकिन उससे हैण्डल पर इतना बोझ पड़ जाता कि वह नीचा हो जाता।

२

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जब दो मील गुजर गये और ऊपर-तलेने एक मुकर्रर बाकायदगी अख्तियार कर ली, तो फैसला किया कि किसी मिस्त्री से पेंच कसवा लेना चाहिए। चुनाञ्चे बाइसिकल को एक दूकान पर ले गया।

बाइसिकल की खड़खड़ से दूकान में जितने लोग काम कर रहे थे, सबके सब उठकर मेरी तरफ देखने लगे। लेकिन मैंने जी कड़ा करके कहा—जरा इसकी मरम्मत कर दीजिये।

एक मिस्त्री आगे बढ़ा। लोहे की एक लम्बी-सी छड़ उसके हाथ में थी, जिससे उसने कई जगह पर बड़ी बेदर्दी के साथ ठोंक-पीट कर देखा। मालूम होता था कि उसने बड़ी तेजी के साथ सारे हाल का अन्दाजा लगा लिया है। लेकिन फिर भी मुझसे पूछने लगा—"किस-किस पुरजे की मरम्मत कराइयेगा ?"

मैंने कहा—"बड़े गुस्ताख हो तुम, देखते नहीं कि सिर्फ हैण्डल और गद्दी को जरा ऊँचा करके कस दो, बस और क्या ? उनको मेहरबानी करके फौरन् ठीक कर दो और बताओ, कितने पैसे हुए ?"

मिस्त्री कहने लगा—'मडगार्ड भी ठीक कर दूँ ?"

मैंने कहा—"हाँ, वह भी ठीक कर दो !"

कहने लगा—"अच्छा हो, यदि आप बाकी चीजें भी ठीक करा लें।"

मैंने कहा—'अच्छा, कर दो।"

बोला—"यों थोड़ा ही हो सकता है। दस-पन्द्रह दिन का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

काम है। आप इसे हमारे पास छोड़ते जाइये।"

मैंने कहा—"और पैसे कितने लोगे?"

कहने लगा—"बस, तीस-चालीस रुपये लगेंगे।"

मैंने कहा—"बस जी, जो काम तुमसे कहा है, कर दो और बाकी मामलों में दखल देने की जरूरत नहीं।"

थोड़ी देर में हैण्डल और गद्दी फिर ऊँची करके कस दी गयी। मैं चलने लगा, तो मिस्त्री ने कहा—"कस तो दिया है, लेकिन पेंच सब घिसे हुए हैं। अभी थोड़ी देर में फिर ढीले हो जायेंगे।"

मैंने कहा—"हैं, बदतमीज कहीं का। तो दो आने पैसे मुफ्त में ले लिये।"

बोला—"जनाब, आपको बाइसिकल भी तो मुफ्त में मिली होगी। यह आपके दोस्त मिर्जा साहब की है न?—लल्लू, यह वही बाइसिकल है, जो पिछले साल मिर्जा साहब यहाँ बेचने को लाये थे। पहचानी तुमने? भई, सदियाँ ही गुजर गयीं, लेकिन इस बाइसिकल की खता माफ होने में नहीं आती। न जाने बेचारी ने पिछले जन्म कौन-सा पाप किया था।"

मैंने कहा—"वाह, मिर्जा साहब के लड़के इस पर कालेज आया-जाया करते थे, और उनको अभी कालेज छोड़े दो साल भी नहीं हुए।"

मिस्त्री ने कहा—"हाँ, यह ठीक है; लेकिन मिर्जा साहब खुद जब कालेज में पढ़ते थे, तो उनके पास भी तो यही बाइसिकल थी।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मेरी तबियत यह सुनकर कुछ मुर्दा-सी हो गयी। मैं बाइसिकल को साथ लिये आहिस्ता-आहिस्ता पैदल चल पड़ा। लेकिन पैदल चलना भी मुश्किल था। इस बाइसिकल के चलाने में ऐसे-ऐसे पुट्ठों पर जोर पड़ा था जो आम बाइसिकलों के चलाने में इस्तेमाल नहीं होते। इसलिए टाँगों और कन्धों, कमर और बाजुओं में जा-बजा दर्द होता था। मिर्जा का खयाल रह रहकर आता था, लेकिन मैं हर बार कोशिश करके उसे दिल से हटा देता था, वरना मैं पागल हो जाता और जुनून की हालत में पहली हरकत मुझसे यह होती कि मिर्जा के मकान के सामने बाजार में एक जलसा करता, जिसमें मिर्जा की मक्कारी, बेईमानी और दगाबाजी पर एक लम्बा-चौड़ा लेक्चर देता। और सारे इन्सान कहलाने वाले जीवों तथा उनकी आनेवाली सन्तान को मिर्जा की नापाक हरकत से आगाह करता और उसके बाद एक चिता जलाकर उसमें जिन्दा जलकर मर जाता।

मैंने बेहतर यही समझा कि जिस तरह हो सके, अब इस बाइसिकल को औने-पौने दामों बेचकर जो वसूल हो, उसी पर सब्र करके बैठ जाऊँ। बला से दस-पन्द्रह रुपये का घाटा ही सही, चालीस के चालीस रुपये का नुकसान तो न उठाना पड़ेगा। रास्ते में बाइसिकलों की एक और दूकान आयी, वहाँ ठहर गया।

दूकानदार बढ़कर मेरे पास आया। लेकिन मेरी जबान में जैसे ताला लगा हुआ था। उम्र-भर कभी किसी चीज के बेचने की नौबत न आयी थी। मुझे यह भी मालूम नहीं कि ऐसे मौके पर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

क्या कहा जाता है। आखिर बड़े सोच-विचार और बड़ी देर के बाद मुँह से सिर्फ इतना निकला कि "यह बाइसिकल है।"

दूकानदार कहने लगा—"फिर?"

मैंने कहा—"लोगे?"

कहने लगा—"क्या मतलब?"

मैंने कहा—"बेचते हैं हम!"

दूकानदार ने मुझे ऐसी नजर से देखा कि मुझे यह महसूस हुआ, मुझ पर चोरी का शक कर रहा है। फिर बाइसिकल को देखा। फिर मुझे देखा। फिर बाइसिकल को देखा। ऐसा मालूम होता था कि फैसला नहीं कर सकता। आदमी कौन-सा है और बाइसिकल कौन-सी है। आखिरकार बोला—"क्या करेंगे आप, इसको बेचकर?"

ऐसे सवालों का खुदा जाने क्या जवाब होता है, मैंने कहा—"क्या तुम यह पूछना चाहते हो कि जो रुपये मुझे वसूल होंगे, वह खर्च कैसे होंगे?"

कहने लगा—"वह तो ठीक है, मगर कोई इसको लेकर करेगा क्या?"

मैंने कहा—"इस पर चढ़ेगा और क्या करेगा?"

कहने लगा—"अच्छा, चढ़ गया—फिर?"

मैंने कहा—"फिर क्या? फिर चलायेगा और क्या?"

दूकानदार बोला—"अच्छा? हूँ खुदाबख्श, जरा यहाँ आना। यह बाइसिकल बिकने आयी है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जिन हजरत का नाम खुदाबख्श था, उन्होंने बाइसिकल को दूर ही से यों देखा, जैसे बू सूँघ रहे हों।

इसके बाद दोनों ने आपस में मशविरा किया। आखिर में वह जिनका नाम खुदाबख्श नहीं था, मेरे पास आये और कहने लगे—"तो आप सचमुच बेच रहे हैं ?"

मैंने कहा—"तो और क्या, महज आपसे बातें करने का शौक चर्राया था, जो घर से यह बहाना गढ़कर लाया हूँ।"

कहने लगा—"तो क्या लेंगे आप ?"

मैंने कहा—"तुम्हीं बताओ ?"

कहने लगा—"सचसच बताऊँ ?"

मैंने कहा—"हाँ।'

फिर कहने लगा—"सचसच बताऊँ ?"

मैंने कहा—'अब बताओगे भी, या यों ही पहेलियाँ बुझाते रहोगे !"

कहने लगा—"तीन रुपये दूँगा इसके।"

मेरा खून खौल उठा और मेरे हाथ, पाँव और होंठ गुस्से के मारे कांपने लगे। मैंने कहा—"ओ छोटी जात के जलील इन्सान, मुझे अपने अपमान की परवाह नहीं। लेकिन तूने अपनी बेहूदी हरकत से इस बेजबान चीज (बाइसिकिल) को जो सदमा पहुँचाया है, उसके लिए मैं तुझ कयामत तक भी माफ नहीं कर सकता।" यह कहकर मैं बाइसिकिल पर सवार हो गया और अन्धाधुन्ध पाँव चलाने लगा।

12173

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मुश्किल से २० कदम गया होऊँगा कि मुझे ऐसा मालूम हुआ, जैसे जमीन एकबारगी उछलकर मुझे आ लगी है। आसमान मेरे सर पर से हट कर मेरी टाँगों के बीच में से गुजर गया और इधर-उधर की इमारतों ने एक दूसरे के साथ अपनी-अपनी जगह बदल ली है। होश-हवास जब ठिकाने लगे, तो मालूम हुआ कि मैं जमीन पर इस बेतकल्लुफी से बैठा हूँ, गोया बड़ी मुद्दत से मुझे इस बात का शौक था, जो आज पूरा हुआ। इर्द-गिर्द कुछ लोग जमा थे। कितने ही तो हँस रहे थे सामने दूकान थी, जहाँ अभी-अभी मैंने साइकिल का मोल-तोल किया था। मैंने अपने चारों तरफ आँखें फाड़-फाड़ कर देखा, तो मालूम हुआ कि मेरी बाइसिकिल का अगला पहिया बिलकुल अलग होकर लुढ़कता हुआ सड़क के उस पार जा पहुँचा है और बाकी बाइसिकिल मेरे पास पड़ी है। मैंने फौरन अपने आपको सँभाला। जो पहिया अलग हो गया था, उसको एक हाथ में उठाया। दूसरे हाथ में दूसरे को थामा और चल खड़ा हुआ। यह महज एक बौखलाहट थी, वरना बाइसिकिल मुझे इतनी प्यारी न थी कि उसको इस तरह लटकाये-लटकाये फिरता।

जब मैं यह सब कुछ उठा कर चल दिया, तो मैंने अपने आपसे पूछा कि यह तुम क्या कर रहे हो—कहाँ जा रहे हो? तुम्हारा इरादा क्या है और यह दो पहिये काहे को लिये जा रहे हो?

सब सवालों का जवाब यही मिला कि देखा जायगा। फिल-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हाल तुम यहाँ से चल दो। सब लोग तुम्हें देख रहे हैं। सर ऊँचा रखो और चलते जाओ। जो हँस रहे हैं, उन्हें हँसने दो। इस किस्म के बेहूदे लोग हर कौम और हर मुल्क में पाये जाते हैं। आखिर हुआ क्या ! सिर्फ़ एक जरा सी दुर्घटना। बस, दायें-बायें मत देखो, चलते जाओ !

लोगों की फबतियाँ भी सुनाई दे रही थीं। एक आवाज आयी—"बस हजरत, गुस्सा थूक डालिये।" एक दूसरे साहब बोले—"बेहया बाइसिकल, घर पहुँच के तुझे मजा चखाऊँगा।" एक सफेद दाढ़ीवाले भले आदमी अपने पोते की उँगली पकड़े जा रहे थे, बोले—"देखो बेटा, यह सरकस की बाइसिकल है, इसके दोनों पहिये अलग-अलग होते हैं।

लेकिन मैं चलता गया। थोड़ी देर के बाद मैं आबादी से दूर निकल गया। अब मेरी रफ़्तार में कुछ नरमी आ गयी थी, मेरा दिल जो कई घण्टों से एक अजीब पेंचोताब खा रहा था। अब बहुत हलका हो गया था। मैं चलता गया, चलता गया, यहाँ तक कि दरिया किनारे तक पहुँच गया। पुल के ऊपर खड़े होकर मैंने इस बेपरवाही के साथ दोनों पहियों को एक-एक करके फेंक दिया जैसे कोई लेटर बक्स में खत डालता हो, और वापस शहर को रवाना हो गया।

सबसे पहले मिर्जा के घर गया। दरवाजा खटखटाया। मिर्जा बोले—"अन्दर आ जाओ।"

मैंने कहा—"आप ही जरा बाहर तशरीफ लाइये !"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह बाहर आये, तो मैंने वह औजार उनकी खिदमत में पेश किये, जो उन्होंने बाइसिकल के साथ मुझे मुफ्त में दिये थे। और कहा—"मिर्जा साहब, आप ही इन औजारों के साथ दिल बहलाया कीजिये, मेरा जी भर चुका है।

इसके बाद रूमाल से मुँह पोंछता अपने घर चला आया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चीनी की अँगूठी

१

एक बड़े जरूरी काम से मैं लखनऊ जा रहा था। एक दिन लखनऊ ठहरना था। टूँडले के स्टेशन पर अपना असबाब कानपुर वाली गाड़ी में रखकर स्टेशन पर टहलने लगा। क्योंकि गाड़ी छूटने में अभी काफी देर थी। टहलते टहलते रिफ्रेशमेन्ट रूम (भोजनालय) को सूँघने लगा। जाली से अन्दर झाँका तो कुछ शक सा हुआ। ग़ौर से झाँक कर देखा तो भाई शजरी! वल्लाह! किस शान से पतलून की जेब में हाथ डाले खड़े थे। सामने मेज़ पर खाने के सामान से लबालब नहीं बल्कि लदालद भरी हुई एक किश्ती (थाल) रखी थी, जिसमें चाय के अलावा केक, टोस्ट, चाकलेट, मक्खन, टूस-फूस वग़ैरह वग़ैरह न मालूम क्या क्या अल्लम ग़ल्लम एक पर एक लदा हुआ था। भाई शजरी खाने को बैठना ही चाहते थे कि मज़हबी पाबन्दी या सफ़ाई का खयाल आ गया। और लपक कर बरामदे वाले नल पर पहुँचे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वे अभी हाथ मुँह धो ही रहे थे कि मैं लपक कर उनकी जगह ………भाई शजरी के आने की आहट पाकर मैंने गरदन और भी नीची कर ली। मैंने केक खाना शुरू ही किया था और आनन फ़ानन में आधे तक पहुँच गया था। हालां कि 'शार्ट-हैंड' तो मैंने सीखा नहीं, फिर भी खाने में मेरे हाथ सिंगर मशीन की तरह चल रहे थे। भाई शजरी उधर अपनी भूख पर धार रखे हुए आये और मुझे इस सेवा में व्यस्त देख कर बोल उठे—'अरे तुम कहाँ ?

मैं तेज़ी से मुँह चला रहा था। मेरे विचार से प्लेट में केक रखा रहने के बजाय, यह कहीं अच्छा था कि मेरे पेट में रहे। इसलिये उस समय मैं अपने गोल गोल गालों के लिहाज़ से हज़रते डारविन के सिद्धान्त की जीती जागती तसवीर बना बैठा था, लेहाज़ा बोलता क्या ख़ाक !

"कहाँ जा रहे हो ?" कह कर भाई शजरी भी खाने पर तुल पड़े, क्योंकि यह मौक़ा शील-संकोच का नहीं था। फिर इसके सिवा भाई शजरी वैसे भी एक कुलफी वाले का मटका लूटने में कालेज में फ़र्स्ट प्राइज़ ले चुके थे। इस कुलफ़ी वाले ने शिकायत करने के लिये इधर उधर भागने या गुल मचाने के बजाय कि हाय ! मुझे लड़कों ने लूट लिया, यह किया था कि खुद भी अपनी कुलफ़ियाँ लूट लूट खाने लगा। वह जीता और लड़के हारे ! क्योंकि उसने अपने तेज़ और कैंचीनुमा हाथों से कुलफ़ियाँ खोल खोल कर बड़ी सफ़ाई के साथ हथेलियों में बट बट कर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बर्फ खाना आरंभ कर दिया था ताकि जो कुछ भी अपने पेट में पहुँच जाय, वही बेहतर है ! हाँ, तो जब केक और अच्छी अच्छी मिठाइयाँ ख़त्म हो चुकीं, याने खाने की घुड़दौड़ ख़त्म हुई और थाल में सिर्फ़ रूखी-सूखी चीज़ें ही रह गईं तब कहीं विचार-परिवर्तन का मौका मिला। अब मुझे भी इतमीनान था, और उन्हें भी !

"कहाँ जा रहे हो, यार ?"—उन्होंने पूछा।

"और तुम कहाँ जा रहे हो ?" मैंने जवाब दिया।

"पहले तुम बताओ !" भाई शजरी ने चाय की प्याली से खेलते हुए कहा।

मैंने आँखों में आँखें डाल कर सूखे मुँह से कहा—"ज़रा टूँडले तक आया था।"

"झूठे हो,—मैं खुद टूँडले तक आया था।" भाई शजरी ने चाय की प्याली होठों से लगाते हुए कहा !

हम दोनों झूठ बोले, क्यों ? महज़ इसलिये कि शायद दूसरा कहे कि मैं किराया दूँगा, मेरे साथ आगे चलो। फिर मज़ा यह कि दोनों को मालूम था कि झूठ बोला जा रहा है।

"कहाँ बैठे हो ?" मैंने अचानक पूछा।

"सेकेण्ड क्लास में।" सहसा भाई शजरी के मुँह से निकल ही तो गया, लेकिन फौरन ही अपनी ग़लती मालूम करके उन्होंने उसी चाय की प्याली को जिससे वे अभी खेल रहे थे, मेरी तरफ़ झटक कर कहा—"बेईमान कहीं का !"

यह कह कर भाई शजरी अपनी हिमाक़त पर हँसे ही थे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कि इतने में ज़ोर से गाड़ी ने सीटी दे दी। इस कम्बख्त सीटी की आवाज़ कानों में पड़ते ही मानों हम दोनों एकदम से जाग उठे और सर पर पाँव रख कर भागे मगर भाई शजरी मय चाय के प्याले के, जिसका कुंडा खेलते खेलते उनकी उँगलियों में ही फँसा रह गया था। उधर होटल वाले ने देखा कि मुसाफ़िर प्याली उड़ाये लिये जाता है, तो वह अलग चिल्लाता हुआ लपका—"लेना-लेना।"

एक ही साथ भाई शजरी के जिम्मे अब दो काम थे; एक तो अपनी उँगली से चाय की प्याली का फँसा हुआ कुंडा निकालना और दूसरे बेतहाशा सर पर पैर रख कर भागना, ताकि गाड़ी छूट न जाय। नतीजा इसका पाठक स्वयं अनुमान में ला सकते हैं। इसके सिवा और सम्भव ही क्या था कि किसी विचित्र ढंग से उँगली में चाय की प्याली का सिर्फ़ कुण्डा ही कुण्डा रह जाय? चुनांचे हुआ भी यही! इसके पहले कि मैं यह बतलाऊँ कि यह किस तरह हुआ, यह जरूरी है कि पाठक को यह बतला दिया जाय कि न तो कोई रेलवे रेगुलेशन ही ऐसा है कि दो बौखलाये हुए व्यक्ति एक ही वक्त में प्लेटफार्म पर जमा न होने पायें और न उनपर किसी क़ायदे या क़ानून के अनुसार यह हुक्म ही है कि प्लेट फ़ार्म पर कोई बदहवास खोंचा फाँदने की सफल या असफल चेष्टा न करे। फिर बदहवासी या बौखलाहट भी तो कोई जुर्म नहीं।। अतः इधर से भाई शजरी चले और उधर से एक और साहब रेल छूटने की घबड़ाहट में खोंचा फाँद-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कर ज़ोर-शोर से लपके। बदक़िस्मती या खुशक़िस्मती से इन दोनों का रेलवे प्लेटफार्म पर 'कोलिज़न' हुआ। जैसे दो गाड़ियों का होता है, और वह भी इस तरह कि—मैं ठीक-ठीक नहीं कह सकता कि—उन्होंने ताककर अपनी नाक भाई शजरी के हाथ में फँसी हुई प्याली पर मारी या फिर भाई शजरी ने ही खुद उनकी नाक पर वार किया। कुछ भी हो, दोनों गिरकर उठे। "अन्धा है बे" भाई शजरी के मुँह से निकला। पलक मारते दोनों उठकर सामने के इण्टर-क्लास में चलती गाड़ी में लपककर घुस गये यह कहने की जरूरत नहीं कि मैं इन दोनों सज्जनों से दो सेकण्ड पहले ही पहुँच चुका था। मुझे देखकर ही भाई शजरी अपना सेकण्ड-क्लास छोड़कर जल्दी में आ गये थे। हाँ, वे गाड़ी में बैठ तो गये, लेकिन बेचारा होटल का ख़ानसामा जो चाय की प्याली लिये-दिये, उनके बेतहाश भागने पर उनके पीछे दौड़ रहा था और जो उनके एक भलेमानस से टक्कर लेने पर कुछ ठिठक-सा गया था, लपक कर गाड़ी की खिड़की से लटक गया। अभीतक भाई शजरी की बौखलाहट दूर न हुई थी कि यह नई आफ़त सर पर सवार हो गई। लगे पैतरे बदलने। कभी हाथ इस जेब में जाता है, तो कभी उस जेब में। मगर निकलता है ख़ाली! उधर ख़ानसामे की चिल्ल-पों "हज़रत वैसे नहीं थे, तो डिशें क्यों उड़ाईं?" आख़िर मामला बढ़ता देख मैंने एक रुपया निकाल प्लैटफार्म पर फेंक दिया। ख़ानसामा चला गया।

Sri Pratap Singh Library Srinagar

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२

अपना क़िस्सा आगे बयान करने के पहले यह ज़रूर है कि 'चाँटे' या 'थप्पड़' के भेद और उनकी विशेषता के सम्बन्ध में कुछ विवेचना की जाय। पंजाब से दक्खिन तक अगर हाथ को किसी गाल पर मारा जाय, या गाल किसी के हाथ पर मारा जाय तो कहा जाता है कि 'चाँटा मारा' या 'चाँटा पड़ा', 'चाँटे' का शब्द बहुत प्रचलित है। 'थप्पड़' भी प्रचलित है लेकिन इन शब्दों के पर्य्यायवाची जितने भी शब्द यू. पी. या दूसरे प्रान्तों में बोले और इस्तेमाल किये जाते हैं, उनके 'उच्चारण' की साइकालोजी (मनोवृत्ति) पर ग़ौर करने से पता चलता है कि चाँटे के अगणित भेद हो सकते हैं। लोगों ने आवाज़ के मुताबिक अलग अलग नाम भी रख लिये हैं। 'चाँटा, वह है, जो गुस्से में किसी के गाल पर रसीद किया जाता है। इसके उच्चारण से ही इसकी ध्वनि-व्यंजना प्रकट हो जाती है। याने यह ज़रूरी है कि चाँटा आवाज़ के साथ उतरे। इस आवाज़ में एक चटाखे की आवाज़ भी छिपी हुई है। 'थप्पण' कभी चाँटे की बराबरी या चाँटे के सदृश अर्थवाची नहीं हो सकता, क्योंकि थप्पड़ से चटाखे की आवाज़—वह आवाज़ जिसका ताल्लुक़ सिर्फ उँगलियों से ही है—नहीं निकलती। थप्पड़ में अभागे गाल पर हाथ की उँगलियों के अलावा हथेली का भी कुछ हिस्सा पड़ जाता है। जो आवाज़ की कमनीयता को खो देता है, लेकिन चोट अवश्य ही करारी लगती है। गाल पर एक थप्पड़ में उँगलियों के निशान पड़ना मुम-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

किन नहीं है, अतः प्रकट है कि थप्पड़ और चाँटे में ज़मीन-आस्मान का फ़र्क है। चाँटे के जोड़ का शब्द तमाचा है; मगर उसमें भी वह तेजो नहीं, जो चाँटे में है। इसके अलावा तमाचा बराबर वालों में इस्तेमाल नहीं होता। आमतौर से यह बड़ों की ओर से छोटों के लिये ही 'रिज़र्व' रखा जाता है। थप्पड़ को कहीं कहीं लप्पड़ भी कहते हैं परन्तु यह शब्द प्रवाहयुक्त नहीं है; मगर क्या किया जाय, जहाँ पर मजबूरी यह हो कि एक तरफ़ तो गाल किसी मोटे आदमी का हो तो दूसरी ओर हाथ भी मौलाना शौकत-अली का—जिसमें चरबी की अधिकता ने सुस्ती पैदा कर दी है। मतलब यह कि इसी क़िस्म के और कितने शब्द हैं। इन्हीं शब्दों में से एक बहुत ही मौज़ूँ और चलता हुआ शब्द है 'ज़्यादा' युक्त प्रान्त से उत्तर शायद भोपाल की तरफ़ बोला जाता है। इस भोपाली ज़पाटे में बिजली की सी गति और हद दर्जे की तेजी मौजूद है। इसकी प्रचण्डता वर्णन से बाहर है। असल में यह चाँटा ही है, मगर बेहद तेज किस्म का। अपनी तेजी और प्रचण्डता के कारण चाँटे और तमांचे की चटाखेदार आवाज़ विशेष कर जपाटे का जन्नाटा अपना आतंक उत्पन्न कर देता है। इसलिये 'जपाटा' वह वह चाँटा है, जिसमें चाँटे की सारी ख़तरनाक बारीकियाँ और उभ्फगियाँ मौजूद हों और उनके अलावा बिजली की सी तेजी भी हो। खैर, इस छोटी सी भूमिका के बाद अब फिर मैं अपहा किस्सा शुरू करता हूँ।

आम तौर पर मुसाफिरों का कायदा है कि सफर की गड़बड़-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सड़बड़ में अक्सर जरूरी चीज़ें भी साथ लेना भूल जाते हैं—जैसे टिफ़िनदान, लोटा, अक़ल, मनुष्यता, सभ्यता, भलमंसी वग़ैरह वग़ैरह। कुछ लोग तो असबाब के बखेड़ों से बचने के लिये जान-बूझकर जरूरत की चीज़ें लेकर नहीं चलते। यही हाल हमारे भाई शजरी का है। वे सफ़र में असबाब के झमेलों के कारण इस तरह की तमाम चीजें घर पर ही छोड़ आया करते हैं। अतः इस सफ़र में भी यही हुआ। लोटा गिलास के साथ-साथ वे अक़्ल तहज़ीब और भलमंसी को भी घर की मेज़ की दराज़ में बन्द कर आये थे।

वह मोटे-ताजे सज्जन, जिनसे भाई शजरी से प्लेटफार्म पर मुठभेड़ हो गई थी। ड्योढ़े दर्जे के डिब्बे में पूरी एक सीट पर लम्बे हो रहे थे। मुँह पर अख़बार था। डब्बा छोटा था, जगह बिल्कुल न थी। दूसरे मुसाफ़िरों के आराम की यह उपेक्षा और लापरवाही भाई शजरी को बेहद नागवार गुजरी, इसलिये उन्होंने कहा—"अख़बार फिर पढ़ियेगा, जरा उठकर बैठिये।"

उन्होंने अख़बार को मुँह पर से हटाया और अपनी टाँगें सिकोड़ लीं, ताकि हम लोग वहाँ बैठ जायँ और फिर अख़बार मुँह पर। भाई शजरी को भला इस गुस्ताख़ी की ताब कहाँ? उनके हाथ से अखबार छीनकर डाँटा—"आप आदमी हैं......"

वह तड़प कर उठे। अख़बार की तरफ हाथ बढ़ाते हुए बोले—"यह क्या बदतमीजी!"

भाई शजरी ने अखबार ऊँचा करके कहा—"या वहशत"!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"इधर लाओ अखबार, बदतमीज कहीं का!"—उन्होंने आगे होकर कहा।

इसके जवाब में भाई शजरी ने उनका छः आने का टाइम्स आफ इण्डिया रेल के बाहर फेंक दिया।

इधर भाई शजरी ने अखबार फेंका, और उधर उन्होंने जल-भुन कर एक अस्सी नम्बर का 'ज़पाटा' इस जोर से भाई शजरी के बाएँ गाल पर रसीद किया कि रेल की घड़घड़ाहट और जन-जनाहट के होते हुए भी ज़पाटे के ज़न्नाटे और तड़ाके से डिब्बा गूँज उठा। भाई शजरी का मुँह चर्खे की तरह घूम गया। उनका बाँका फेल्ट हैट दूर जा गिरा।

भाई शजरी ने संभलते ही एक, दो, तीन हाथ ताबड़तोड़ उनके दिये। उन्होंने भी हमले को रोक पचहत्तर नम्बर का एक और 'ज़पाटा' भाई शजरी को रसीद किया। मगर अब मैं भी अपने दोस्त की मदद पर आ पहुँचा था। मगर मेरे तीन घूँसों में से एक तो ऊपरवाली बेंच पर पड़ा और दो दुश्मन के लगे थे इस बीच में उन दो ज़पाटों के सिवा दोनों तरफ से दस बीस हाथ चल चुके थे। यह सब कुछ पलक मारते हो गया। हम दोनों दुश्मन पर भारी पड़ते कि "हैं हैं" करके दो तीन मुसाफ़िरों ने बीच बचाव कर दिया। इसके बाद गाली-गलौज की मंज़िलें तय होने लगीं। इस मुश्किल से लोगों ने शेरों को काबू में किया कि बयान से बाहर है। हम दोनों दुश्मन का कुछ न बिगाड़ सके थे, क्योंकि दरअसल मैं ऐसे मौके पर था कि इस जंग में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अच्छी तरह हिस्सा न ले सकता था।

अब इस जंग के नतीजे पर ग़ौर कीजिये। चाय की प्याली के कुंडे की धारदार कगर से दुश्मन को बाँई हथेली की पीठ पर गहरा ज़ख्म लगा था। बस, इस ज़ख्म के सिवा दुश्मन पर कोई वार सच्चा न उतरा था। या तो कलाई पर रुक गये थे या औंधे पड़े थे; मगर इधर भाई शजरी के गालों पर 'ज़पाटों' के निशान इस सफ़ाई से मौजूद थे कि कान तक गवाही दे रहे थे! कहने को तो यह 'मार-पीट' थी; मगर वास्तव में थी केवल पीट, क्योंकि ग़ौर करने पर मुझे इसी नतीजे पर पहुँचना पड़ा कि भाई शजरी खूब पिटे। मेरे शेर ने भी क्या क्या चाँटे दिये कि हँसी को रोकना मुश्किल हो गया। हम दोनों अब दूसरी बेंच पर बैठ गये और बातें करनी शुरू कीं। भाई शजरी ने इस शान से सिगार निकाल कर सुलगाया, मानों इनको पिटने से न तो कभी कोई ताअल्लुक़ था, और न है।

"इसको आगे चलकर ठोंकेंगे।" भाई शजरी ने मुझसे परामर्श की भाँति चुपके से कहा।

"जरूर,"—मैंने उत्तर दिया, और सोचने लगा कि इन शब्दों के कहीं यह अर्थ तो नहीं हैं कि इससे आगे चलकर भी पिटेंगे। क्योंकि यह नालायक़ शख्स सिर्फ़ तगड़ा ही न था, बल्कि हम दोनों से काफ़ी तौर पर निपट लेने की ताक़त रखता था: मगर चाहता मैं भी यही था कि किसी तरह आगे चलकर इस मूज़ी को मारें।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अब हम दोनों में बातें शुरू हुईं। भाई शजरी को मैं उनके सेकण्ड क्लास में क्यों जाने देता, और फिर शायद वह खुद भी न गये। गरज यह कि अब बातें शुरू हुईं, और सच सच हाल एक दूसरे को बताना पड़ा। भाई शजरी लखनऊ जा रहे थे। वहाँ से एक दूसरी जगह एक अपने बड़े 'गहरे दोस्त' से मिलने।

"यह कौन दोस्त हैं तुम्हारे?"

"एक हैं।" भाई शजरी ने जवाब दिया।

"कौन हैं आखिर—क्या नाम है उनका, कुछ तो बताओ?"

'दोस्त तो क्या हैं,' 'भाई शजरी बोले—"एक अच्छा खासा उल्लू फाँसा है, अजीब अहमक़ हैं।"

"कौन?"—मैंने पूछा।

"महज़ जरा सी मुलाकात पर खत पर खत! मुलाकात का शौक! तक़ाजे पर तक़ाजा! नाक में दम कर दिया है यार मेरे ने! मजबूरन वादा किया कि लखनऊ आये तो तुमसे ज़रूर मिलेंगे। चलो न, यार, तुम भी चलो!"

वह हजरत, जिनकी हमसे जंग हुई थी, अब तक गौर से बातें सुन रहे थे, अब उठ कर घूमते हुए पाखाने गये। मैंने कहा—"यार, पहले यह बताओ कि हैं वह कौन? क्या नाम है उनका? क्या करते हैं? तुमसे कब मुलाक़ात हुई?"

भाई शजरी ने सारा हाल बताया—"ज़मींदार हैं। शिकार का बेहद शौक है। मुलाकात कभी नहीं हुई। खत किताबत की मुलाकात है, और वह भी एक बन्दूक की लिया बेची के जरिये!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

फिर भी एक दूसरे के बड़े गहरे दोस्त हैं।"

"फिर तुमने उन्हें बेवक़ूफ़ और अहमक क्यों कहा ?" मैंने भाई शजरी से पूछा। उधर वह हजरत पाखाने से वापस आकर भाई शजरी के चोट खाये हुए गाल पर अपनी उँगलियों के निशान गौर से देखने लगे। मुझसे आँखें चार हुई, और अपनी कारगुजारी को देखकर कुछ मुसकराये। सचमुच भाई शजरी को उन्होंने करारे जपाटे रसीद किये थे। शजरी भाई ने उनकी मुसकराहट और मुसकराने की वजह मालूम कर ली। भाई साहब तो जल भुनकर कबाब हो गये। आँखों ही आँखों में उनकी तरफ इस तरह देखा, मानों उन्हें खा ही जायँगे। हम दोनों फिर बातें करने लगे। भाई शजरी ने इस सिलसिले में कहा—"मुझे ऐसे लोगों से दरअसल सख्त नफ़रत है कि ख्वामख्वाह का रटना रटे जाते हैं।"

मैंने कहा—"यार, पहली बार मिलेगा, तो ख़ातिर तो बेहद करेगा।"

"तभी तो कहते हैं कि चलो तुम भी। ऐसा उल्लू कम फँसता है। ऐसा ठूँस-ठूँसकर खायेंगे कि याद करेगा कि आया था कोई।"

आपने देखा होगा कि बाज़ कारीगर एक छोटी-सी हथौड़ी और बुलि लिये स्टेशनों पर घूमते फिरते हैं और दो आने पैसे लेकर आपका नाम वहीं-का-वहीं बरतन पर खोद देते हैं। ऐसा ही एक कारीगर हमारे डिब्बे में आया। रेल रुकने पर एक स्टेशन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर लगा एक साहब के लोटे पर नाम खोदने। भीड़ लग गई। किस क़दर सफ़ाई से खूबसूरत हरफ़ों में नाम खोदता था। बेहद पसन्द आया। ख़ासकर भाई शजरी को। वह नये फैशन के आदमी, उनके पास भला लोटा क्यों होता? मेरा टोंटीदार (मुसलमानी) लोटा लेकर कहने लगे, इसपर नाम खुदवायेंगे। मैं इसके विरोध में था। मगर भाई शजरी न माने और नाम खुदवाने लगे। नाम खुदवाकर लोटा तो एक किनारे रखा, और लगे हम दोनों स्टेशन पर टहलने।

(३)

कानपुर के स्टेशन पर हमलोगों को इसकी फ़िक्र हुई कि अपने दुश्मन को किस तरह मारें; मगर कोई तदबीर न आती थी। वह भी लखनऊ जा रहा था। इसलिये तय हुआ कि लखनऊ पहुँचकर मारेंगे। लखनऊ भी दूर न था। सफ़र का ज्यादा हिस्सा भाई शजरी ने मेरे ही साथ तय किया था। यों तो मैं भी उनके साथ कभी-कभी सेकण्ड-क्लास में जा बैठता था। लखनऊ का स्टेशन जब क़रीब आया, तो भाई शजरी ने मुझसे सलाह की कि इसे अब मारो। मौक़ा भी मिल गया। मैं असबाब वगैरह लेकर स्टेशन से फौरन् बाहर निकल गया और भाई शजरी उसी लोटे से सशस्त्र होकर दुश्मन की ओर बढ़े। दाँव भी खूब मिला। वह लगा ट्रंक का कुंडा पकड़कर कुली के सर पर लदवाने, और पीछे से भाई शजरी ने उसमें कूल्हे पर लोटे की टोंटी पकड़ कर दिया कस-कर! जैसे भीमसेनी गदा पड़ी हो, फिर वे जो सरपट भागे, तो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इस तेज़ी से कि मेरे पास से होकर निकल गये, और बौखलाहट में मुझे देखा तक नहीं ! जब मैंने आवाज़ दी, तो घबड़ाकर कहा—"चलो, जल्दी भागो।" क्योंकि खूब जानते थे कि अगर कहीं पकड़ पायेगा, तो बेतरह कुंदी करेगा। मगर फिर उस मूज़ी का पता न लगा।

लखनऊ में हम दोनों दो दिन साथ रहे। फिर भाई शजरी और हम दोनों बाराबंकी चले। उन्हीं दोस्त से मिलने, जिनका ज़िक्र भाई शज़री ने ट्रेन पर किया था। गाड़ी जो बाराबंकी स्टेशन पर पहुँची तो—सर तो हम दोनों निकाले ही हुए थे—वह मूज़ी खड़ा दिखाई दिया। हम दोनों से आँखें चार हुईं ! भाई शजरी ने गड़ाप से गरदन अन्दर कर ली। मैंने उनसे कहा—"अब तुम्हें छोड़ने का नहीं, बुरी तरह ठोंकेगा।"

"उसकी ऐसी-की-तैसी !" भाई शजरी ने कहा, और कुछ सोच में पड़ गए। गाड़ी रुकी, तो झटके से गोया वह जाग-से पड़े। इधर मैंने पुकारा—"कुली !" और उधर वह मूज़ी सर पर ! भाई शजरी ने लोटे की गदा हाथ में लेकर कहा—"सर फोड़ दूँगा।" मगर वह न मालूम किस गड़बड़ में था, घूँसा दिखाकर तेजी से चलता बना। असबाब उतरवाकर हम दोनों इधर-उधर देखने लगे। क्योंकि भाई शजरी ने अपने बाराबंकी पहुँचने का तार दे दिया था। और पूरी उम्मेद थी कि उनके दोस्त स्वागत के लिये स्टेशन जरूर आयेंगे। इन्तज़ार कर ही रहे थे कि पट आया वह मूज़ी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"आप कहाँ से आये हैं ?"—उसने गोया भाई शजरी को ठोंकने की सूचना दी।

"जहन्नुम से",—भाई शजरी ने लोटा तानकर कहा—"सर फोड़ दूँगा।"

"जानते हो, कहाँ हो ?"—उसने कहा—"रेल के धोखे में न रहना, यह बाराबंकी है। सारी साहब बहादुरी भुला दूँगा।" यह कहकर कि शुक्र है वह चलता बना। इधर हम दोनों ने मिल कर आपस में इससे कहीं अधिक भयंकर शब्द उसके लिये इस्तेमाल किये।

हमलोग कुछ देरतक इन्तज़ार करते रहे। आख़िर में भाई शजरी ने कहा—"तार मिला न होगा"।

कुली से असबाब उठवाकर बाहर निकले। ताँगा किया। अपने दोस्त का नाम और पूरा पता बताया कि ले चलो वहाँ !

एक गली के किनारे पर ताँगे को छोड़कर हम दोनों इस ख़याल से कि मकान का पता लगा लें, तो ताँगा इधर लायें। अन्दाज़ से एक मकान पर पहुँचे। दरवाज़ा खटखटाया। एक साहब से मालूम हुआ कि यह मकान छोड़कर तीसरे में दरियाफ़्त कीजिये। वहाँ पहुँचे। नौकर से पूछा। मालूम हुआ कि अन्दर हैं। नौकर से बुलवाया, तो कहा कि बैठिये !

आपको यक़ीन न होगा कि अन्दर से वही मूज़ी निकला और निकलते ही सामनेवाले कमरे में चला गया। वह रोशनी में था और हम अँधेरे में ! "यह तो वही है"—घबड़ाकर भाई शजरी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ने कहा और नौकर से पूछा—"यही है ?"

जैसे ही नौकर ने कहा—"हाँ !" वैसे ही भाई शजरी ने तेज़ी से कहा—"यार भागो।" हम दोनों सर पर पैर रखकर जो भागे तो ताँगे पर आकर दम लिया। और वहाँ से सीधे स्टेशन ! साढ़े नौ बजे की गाड़ी से वापस लखनऊ ! घर पहुँचने के पहले भाई शजरी ने लखनऊ से ही माफ़ी का एक तार लिखकर भेज दिया कि अफ़सोस, मैं वादे पर हाज़िर न हो सका।

आजतक उस अनजान दोस्त से ख़त-किताबत के ज़रिये भाई शजरी की दोस्ती उसी तरह क़ायम है। वास्तव में बड़ी गहरी दोस्ती है !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

केले का छिलका

१७ फरवरी सन् १६२७ की रात को नवाब छुट्टन नहर के किनारे चले जा रहे थे कि एक केले के छिलके पर से जो खुदा जाने किस कम्बख्त ने वहाँ फेंक दिया था, पाँव फिसला और नवाब आली क़दर गड़ाप से नहर में जा गिरे। जरा १७ फरवरी १६२७ की तारीख ध्यान में रखिये। अगर बलरामपुर के शेख़ शबराती इस मौके पर मौजूद न होते तो दुनिया नवाब छुट्टन को नीली कोठी वाले स्वर्गीय नवाब छुट्टन के नाम से याद करती। अब यह सुनिये, कि शेख़ शबराती ने नवाब छुट्टन की जान कैसे बचाई ?

कहते हैं कि जब शेख जी ने—जो नहर के पास से गुजर रहे थे—पानी में बुलबुले उठते देखे तो बोल उठे—"हाय! यह क्या ?" उधर से नवाब छुट्टन भी पुकार उठे कि "अमां बचाइयो, मैं डूबा !" शेख़ शबराती ने अचकन उतारते हुए कहा—"यार, अभी न डूबियो—मैं आता हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शेख़ जी ने नहर में कूदते ही नवाब को बालों से पकड़ लिया। कहने लगे—"तुम भी जरा हाथ पाँव मारो। तुम्हें तो तैरना भी नहीं आता। मुझे न मारो भाई, हाथ-पाँव मारो।"

गरज शेख़ शबराती ने नवाब छुट्टन को खींच-खाँच के किनारे पहुँचाया, लेकिन किनारे पहुँचने से पहले नवाब साहब को इस बात का अनुभव हो चुका था कि अगर यह मर्द आदमी आज यहाँ न होता तो अपने मरहूम बाप के पास कभी के जन्नत में पहुँच चुके होते। चुनांचे किनारे पहुँचते ही उन्होंने कहा—"यार, अगर तुम यों नहर में कूद न पड़ते तो मैं खत्म हो चुका था।"

शेख़ शबराती कहने लगे—"आज ज़्यादा खा गये थे क्या ?"

नवाब ने इस बात का कोई जवाब न दिया और इधर-उधर टटोलते हुए कहने लगे।

"भई, तुमने मेरा चश्मा तो नहीं देखा ?"

"अरे यार, इस हालत में भी तुम्हें चश्मे की पड़ी है। जरा अपनी तरफ देखो तो सही। सारा लिबास भींग गया है।

"बात तो ठीक है लेकिन यह समझ में नहीं आता कि मैं नहर में गिरा कैसे ?"

"मालूम होता है कि किसी चीज पर से तुम्हारा पाँव फिसल गया।"

"आखिर काहे पर से—"

"शेख शबराती इधर-उधर टटोल कर बोले—"लो, मिल गया।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"मेरा चश्मा !"

"जहन्नम में जाय तुम्हारा चश्मा, मुझे तो वह केले का छिलका मिला है जिस पर से तुम्हारा पाँव फिसला था। अब मेरी सलाह मानो तो सीधे घर चले जाओ। और कपड़े उतार कर सो रहो। अगर थोड़ी-सी बराण्डी मिल जाय तो सुभान अल्लाह!"

"कम्बख्त बरांडी का ही तो सारा फसाद है। अगर आज कुछ ज्यादा न पी गया होता, तो क्या मुझे केले का छिलका नजर न आता ?"

"तुम रहते कहाँ हो ?"

"मैं पास ही रहता हूँ। आओ, चलें। हाँ भई, मैं तो तुम्हारा नाम भी नहीं जानता।"

"मेरा नाम शबराती है—शेख शबराती।"

"अजीब बात है। मैंने तुम्हारा नाम कभी नहीं सुना—हालां कि तुमने अभी-अभी मेरी जान बचाई है।"

"आओ चलो, मैं तो सर्दी से ठिठुरा जा रहा हूँ।"

"हाँ चलो। लेकिन भई, तुम्हें मालूम है कि अगर तुम न होते तो आज मैं डूब गया होता।"

"अब इसे भूल भी जाओ।"

"कैसे भूलूँ, मरते दम तक नहीं भूल सकता।"

इतने में नीली कोठी का बाहरी फाटक आ गया और नवाब छुट्टन उसके पास पहुँचकर रुक गये।

शेख़ शबराती ने पूछा—' यहाँ क्यों ठहर गये ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"अच्छा अब रुख़सत होता हूँ। मैं यहीं रहता हूँ। लेकिन मियाँ, तुमने मेरी जान बचाई है और मुझे तुम्हारी कोई-न-कोई ख़िदमत ज़रूर करनी चाहिये। अच्छा तुमने अपना नाम क्या बताया था ?"

"लाहौल बिलाक़ूवत ! अभी से नाम भूल गये। मेरा नाम शेख़ शबराती है।"

"लेकिन मियाँ शेख़ शबराती, तुम्हें मालूम है कि मैं तुम्हें जानता तक नहीं। उम्र भर में पहली मरतबा तुम्हारा नाम सुना है। हाँ, तो मैं क्या कह रहा था ? कल यहाँ नीली कोठी में ज़रूर आइयो और मुझसे मिलियो।"

"लेकिन तुम्हारा नाम क्या है ?"

"मेरा नाम—मेरा नाम छुट्टन है, छुट्टन !"

"छुट्टन ?"

"हाँ, छुट्टन, तो अच्छा खुदा हाफ़िज़ ! मैं तुम्हारा नाम तो नहीं जानता, लेकिन तुमने बड़ा अहसान किया है मुझ पर ! जान बचाई है मेरी, अच्छा तो चलूँ ! कल ज़रूर मिलियो, मेरा नाम छुट्टन है !"

यह कह कर नवाब छुट्टन तो नीली कोठी में घुस गये। और हमारा शेख़ शबराती घर की तरफ चल पड़ा। यहाँ से उसका गाँव कोई तीन मील की दूरी पर था। एक तो अन्धेरी रात ! दूसरे सारे कपड़े भींगे हुए थे। बेचारा बड़ी मुश्किल से गिरता-पड़ता घर पहुँचा और सारे रास्ते यही सोचता रहा—"खूब

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आदमी है यह छुट्टन भी, कोई साईस या खानसामा मालूम होता है और क्या अजब कि किसी बड़े आदमी का दारोग़ा हो।"

❀ ❀ ❀

नवाब छुट्टन बड़े आली खानदान रईस थे। लेकिन कुछ उनके बाप की फ़ज़ूलखर्ची और कुछ उनकी शानो शौकत की बदौलत वह पहली सी बात नहीं रही। नीली कोठी के इर्द-गिर्द हज़ारों एकड़ ज़मीन थी। जिसमें बहुत-सी बिक गई थी और जो बाकी रह गई थी, वह भी नवाब के हाथों से निकलती चली जा रही थी। लेकिन नीली कोठी का ठाट-बाट अभी तक वही था। इसलिये शेख़ शबराती ने फाटक के अन्दर क़दम रखा, तो बहुत चकराया कि इलाही मैं कहाँ आ गया। एक खिदमतगार ने बढ़कर रोका कि तुम्हें क्या काम है? खिदमतगार ने कुछ ऐसे भड़कीले कपड़े पहन रखे थे और गुफ्तगू का अन्दाज़ ऐसा था कि बेचारा शेख़ बदहवास हो गया और कहने लगा—"हुज़ूर, मुझे यहाँ मियाँ छुट्टन से मिलना है।"

खिदमतगार बोला—"मियाँ छुट्टन तो यहाँ नहीं रहते। यह तो नवाब छुट्टन की कोठी है।"

"यों ही सही।"

"क्या काम है तुम्हें?"

"यों ही ज़रा उनसे मिलने चला आया था।"

"मिलने चले आये थे—आप—लेकिन……!"

"मैं खुद थोड़े ही आया हूँ—उन्होंने बुलाया था।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

खुदा जाने खिदमतगार क्या कहता और शेख शबराती पर क्या गुज़रती ? इत्तफ़ाक़ से खुद नवाब छुट्टन किसी काम से बरामदे में चले आये। शबराती ने इन्हें देखते ही गुल मचाया—"छुट्टन···" नवाब छुट्टन !!" नवाब साहब चौंक पड़े और आँखें फाड़ फाड़ कर शबराती को ताकने लगे। शबराती बोला—

"कहो, अच्छे तो हो। मैं जरा योंही मिलने चला आया।"

नवाब छुट्टन लड़खड़ाती हुई आवाज में बोले—"क्या तुमसे मेरी जान पहचान है ?"

"बस, भूल गये ?"

"नहीं तो—तुम्हारा चेहरा कुछ पहचाना-सा जरूर मालूम होता है। याद नहीं पड़ता, मैंने तुम्हें कहाँ देखा है ?"

"वह नहर की बात है ?"

"हाँ, अब याद आया। आओ, अन्दर आओ।"

नहर का नाम सुनकर खिदमतगार बहुत घबराया कि खुदा जाने क्या किस्सा है। दमभर में यह खबर सारे नौकरों में मशहूर हो गई और तरह-तरह की अटकल-बाजियाँ लगाई जाने लगीं।

❀ ✱ ❀

नवाब छुट्टन 'शेख शबराती को दीवानखाने में बैठाकर कहने लगे—"अब मुझे याद आया, रात को मैं नहर में गोते खा रहा था कि तुमने मेरी जान बचाई थी।"

"अमाँ, इसे भूल भी जाओ।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"कैसे भूलूँ भाई, तुम्हारा बड़ा अहसान है मुझ पर। अब कहो, मैं तुम्हारी क्या खिदमत करूँ ?"

"कुछ भी नहीं, मेरे पास अल्लाह का दिया सब कुछ है। गर्मियों में शरबत बेचता हूँ। जाड़े में नानखताइयाँ। एक मुर्गी-खाना भी खोल रखा है। अण्डों और मुर्गियों से भी खासा नफा हो जाता है और क्या चाहिये हम तुम दोस्त ठहरे। अब दोस्त से कोई क्या माँगे ?"

"हम तुम दोस्त तो हैं। लेकिन मुझे तुम्हारे लिये कुछ न कुछ जरूर करना चाहिये।"

"तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो अपने यहाँ के शन्तरों की टोकरी भेजवा दो। और भेजवाना क्या है। मैं खुद ही लिये जाता हूँ।"

ग़रज़ शेख शबराती ने बाग में पहुँचकर अच्छे-अच्छे शन्तरे छाँटे और उन्हें लेकर घर की तरफ़ चल दिये। लेकिन इत्तफाक यह कि नवाब से इसकी जो बातें हुई थीं वह बावर्ची के छोकरे ने सुन पाईं। उसने अपने बाप को सारा किस्सा सुनाया। उसने बुआ लतीफ़न से कहा और बुआ लतीफ़न ने नवाब छुट्टन की फूफी खुरशीद लक़ा बेगम को जा सुनाया। यह बड़ी सलीकेवाली और दानिशमन्द थीं। नवाब की जागीर का सारा इन्तज़ाम इन्हीं के हाथों में था। उन्होंने सुना तो नवाब को बुला भेजा और कहा— "छुट्टन, मैं यह क्या सुनती हूँ! तुमने किस मुये गँवार को मुँह चढ़ा रखा है ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नवाब छुट्टन कुछ देर तो सर झुकाये खड़े रहे। फिर बोले—"मैं क्या करूँ? इस कम्बख्त का मुझ पर बड़ा अहसान है। मेरी जान बचाई है उसने।"

खुरशीद लक्क़ा बेगम तिनक कर बोलीं—

"जान बचाई है, तो कुछ दे दिला के रुखसत करो। ऐसे लुच्चे शोहदों से यों रब्त-ज़ब्त बढ़ाना, भाई और दोस्त बनाना ठीक नहीं।"

नवाब छुट्टन ने कुछ जवाब न दिया और दीवानखाने में चले आये।

❀ ❀ ❀

दूसरे दिन नवाब छुट्टन के यहाँ एक ज़बर्दस्त दावत थी। शहर भर के रईस और आला अफसरों को न्योता दिया गया था। कुछ मेहमान आ गये थे। कुछ आ रहे थे कि नवाब छुट्टन अपने दोस्त इफ्तिख़ार अली के साथ बातें करते-करते बाग़ की तरफ़ निकले। इतने में किसी ने पुकारा, "छुट्टन!" नवाब साहब घबरा गये। नज़र उठा के देखा तो सामने दो छोटे-छोटे लड़के दिखाई दिये। इनमें से एक ने सिर्फ लुंगी बाँध रखी थी, दूसरा सिर्फ कुरता पहने हुए था। एक के हाथ में टोकरी थी। इन्हें देखकर वह आगे बढ़े। और उनमें से एक कहने लगा—

"तुममें से नवाब छुट्टन किसका नाम है?"

नवाब ने आगे बढ़कर कहा—"मैं हूँ!"

लड़का बोला—"अच्छा तो तुम हो—वह नवाब जिसे मेरे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अब्बा ने नहर से निकाला था। हम दोनों भाई तुम्हें देखने आये हैं। अब्बा ने शन्तरों का बहुत-बहुत शुक्रिया अदा किया है और यह टोकरी वापस भेजी है।"

सर इफ्तिखार अली कहने लगे कि यह अजीब वाक़या है।

नवाब छुट्टन बोले—"हाँ भाई, बात यह है कि मैं कल नहर में गिर गया था।"

लड़का बीच में बोल उठा—"और तुम शराब के नशे में थे।"

❀ ❀ ❀

उन दिनों खुरशीद लक़ा बेगम को नवाब छुट्टन के ब्याह की बहुत फ़िक्र थी। बहुतेरे पैग़ाम आये। लेकिन नवाब छुट्टन ने कोई रिश्तेदार पसन्द न किया। दरअसल वह मिस्टर लतीफ़ अहमद बैरिस्टर की साहबज़ादी लतीफ़ बानू से ब्याह रचाने की फ़िक्र में थे। लड़की एक तो बड़ी हसीन थी, दूसरे इसने पढ़ने-लिखने में मर्दों के कान काटे थे। नवाब की फूफी को इस रिश्ते पर कोई आपत्ति थी तो यह कि लतीफ़ बानू पर्दे में नहीं रहा करती थी लेकिन नवाब ने मिन्नत खुशामद करके फूफी को राज़ी कर लिया। एक रोज़ शाम का ज़िक्र है—नवाब छुट्टन लतीफ़ बानू को सिनेमा दिखाने ले गये। पक्के पुल के पास उनकी मोटर कोई दमभर के लिये रुक गई, कि आवाज़ आई, "ज़रा ठहरे रहिये, मैं आया।" नवाब छुट्टन ने देखा कि शेख़ शबराती सर पर अण्डों की टोकरी उठाये बग़ल में मुर्गियाँ दाबे चले आ रहे थे। कम्बख्त आते ही मोटर का दरवाज़ा खोलकर अन्दर घुस गया। और कहने लगा—"यार,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तुम्हें तकलीफ़ तो होगी लेकिन जुम्मन भटियारे के यहाँ यह मुर्गियाँ और अण्डे पहुँचाना है, मुझे अगले नुक्कड़ पर उतार दीजो; और दोस्त, यह नेकबख्त कौन हैं। आदाब अर्ज़ करता हूँ। मिज़ाज अच्छे हैं आपके?—"

नवाब पर तो घड़ों पानी ढल गया। लेकिन बेचारा कहे तो क्या कहे? इतने में अगला नुक्कड़ आया। और शेख़ शबराती आदाब अर्ज़ करके चल दिया। इधर रास्ते भर लतीफ़ बानू ने नवाब से बात तक नहीं की। नवाब ने बहुतेरा कहा—"बात यह है कि......बात यह है कि..... लेकिन बेसूद, सिनेमा का मज़ा किरकिरा हो गया। दूसरे दिन लतीफ़ बानू ने लिख भेजा कि मैं आपसे राह व रस्म बढ़ाना नहीं चाहती।

* * *

बेगम खुरशीद लक़ा को मालूम हुआ तो बहुत बिगड़ीं और नवाब छुट्टन से कहने लगीं—"तुमने खान्दान की इज्जत खाक में मिला दी, मैं अब कमबख्त से पीछा छुड़ाने की तदबीर करता हूँ।"

यह कहकर दारोग़ा को बुलवाया और उससे शेख़ शबराती के नाम इस मज़मून का ख़त लिखवाया कि—"तुमने नवाब छुट्टन की जान बचाई है, इसलिये डेढ़ हज़ार रुपये तुम्हें इनाम के तौर पर भेजे जाते हैं लेकिन शर्त यह है कि नीली कोठी में आइन्दा कभी क़दम न रखना क्योंकि नवाब छुट्टन तुमसे कोई ताल्लुक़ नहीं रखना चाहते।" ख़त के साथ डेढ़ हज़ार रुपये का चेक था।

दूसरे दिन नवाब छुट्टन छत्तामल बजाज की दूकान से कुछ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कपड़े खरीद रहे थे, इतने में शेख़ शबराती आ गया और कहने लगा—"मैं तुमसे कुछ कहना चाहता हूँ, सामने चाय की दूकान है, वहाँ पाँच मिनट के लिये चल बैठो।"

नवाब ने कहा, "लेकिन बात यह है कि"—

शेख़ शबराती ने बात काटकर कहा,

"तो अच्छा, यहीं बातें कर लेता हूँ। आज मुझे एक ख़त मिला, तुम्हारी उस बुढ़िया फूफी ने लिखवाया होगा!"

नवाब की ज़बान से सिर्फ़ इतना निकला,—"देखो, देखो!"

शबराती ने जवाब दिया:—

"देखूँ क्या? उसने मुझे डेढ़ हजार का चेक भेजा है। मैं रुपये का भूखा तो नहीं, मगर इस ख़याल से क़बूल कर लिया कि तुम्हारा दिल न टूटे। हाँ तो ख़त में लिखा है कि नवाब तुमसे कोई ताल्लुक नहीं रखना चाहता। मैं पूछता हूँ यह क्या हरकत है? आख़िर मैंने तुमसे क्या बुराई की?

नवाब ने कहा, "क़सम है जनाब अमीर की......"

शेख़ शबराती गरज कर बोला;—

यही है मेरे अहसान का बदला? अगर मैं उस रात जान पर खेल कर नहर से न निकालता तो आज तुम कहाँ होते? अरे! मुझ जैसे दोस्त से तुम्हारा यह सलूक—मुझ जैसे दोस्त से—जिसने तुम्हारी जान बचाई? मैं तो तुम्हें दोस्त समझता था, जिगरी दोस्त!"

इतने में लोग जमा हो गये, नवाब फ़ज़ीहत के डर से बोला—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"भाई मुझे तो मालूम भी नहीं, फूफी अम्मा ने मुझसे बिला पूछे वह ख़त लिखवा दिया।"

यह सुनकर शेख़ शबराती का गुस्सा धीमा हुआ और कहने लगा—

"यह तो मुझे भी शुबहा था। खैर सब किस्से को जाने दो, आओ चलकर चाय पी लें।"

जुम्मन भठियारा अभी तक हर गाहक से कहता है कि मेरे यहाँ नवाब छुट्टन अकसर चाय पीने आते हैं।

* * *

नवाब छुट्टन आठ दिन तक घर से बाहर नहीं निकले। खुरशीद लक़ा बेगम भी मुँह फुलाये बैठी रहीं। नवें दिन नवाब टहलते-टहलते फाटक तक आये कि सामने से आवाज़ आई—

"नबाब साहब !"

सड़क के उस पार एक छोटा-सा मकान था। जिसके सामने शेख़ शबराती के दोनों साहबज़ादे खड़े थे। इतने में शेख़ शबराती का चेहरा दिखाई दिया। उसने दोनों लड़कों को एक-एक चाँटा रसीद किया; और नवाब के पास पहुँचकर कहने लगा—

"यह मकान मुद्दत से बिकाऊ था। तुमने जो डेढ़ हज़ार रुपया भेजा तो मैंने सोचा कि मकान ही क्यों न ख़रीद लूँ ? अब तुम्हारे पड़ोसी हैं हम। आओ नवाब ! तुम्हें मकान दिखाऊँ !

नवाब ने सर खुजाया—"फिर कभी सही—!"

रात को नवाब छुट्टन खुरशीद लक़ा बेगम से कहने लगे—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"फूफी अम्माँ, आपने शेख़ शबराती से खूब पीछा छुड़ाया। उस डेढ़ हज़ार रुपये से शेख़ साहब ने हमारे पड़ोस में एक मकान ख़रीद लिया है। अब वह रात दिन मेरे सर पर तैनात रहेंगे।"

२३ जून सन् १६२७ की रात को नहर के पास एक टोपी पड़ी पाई गई, थोड़ी देर में पुलिसवाले नीली कोठी के नवाब छुट्टन को नहर से खींचकर किनारे ले आये। बेचारे नवाब में सिर्फ़ ज़रा-सी जान बाक़ी रह गई थी।

अब नहर के किनारे कोई केले का छिलका भी नहीं था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जी हाँ, पिटे हैं !

यह तो कहना ही गलत है कि हम जिन्दगी भर कभी नहीं पिटे; यह बात और है कि कोई बचपन में पिटा और कोई जवान होकर। कोई पिटकर भी नहीं कहता कि मैं पीटा गया हूँ। यह हौसला, यह दमख़म तो कुछ हमी में है कि हम चीख़-चीख़ कर कह रहे हैं कि "जी हाँ, पिटे हैं" और एक मरतबा नहीं, बल्कि कई बार ! अगर यह पूछिये कि कब और किस तरह, तो सुनिये ! दो-चार मरतबे की तो मैं बतलाये देता हूँ; यह भी अकसर हुआ है कि साहब, हम पिटे हैं तो पीटा भी है, चाहे वह लाठियाँ खाकर, खपच्चियाँ ही क्यों न मारी हों; और इस मिसरे को बराबर दोहराता रहा हूँ कि—

"क्या ख़ूब सौदा नक़द है, इस हाथ दे उस हाथ ले।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

साइमन कमीशन के लखनऊ तशरीफ लाने पर जिस वक्त "साइमन गो बंक" के नारों से अमीनाबाद पार्क गूँज रहा था और काली झण्डियों से कमीशन का स्वागत करनेवालों के अलावा बहुत-से तमाशाइयों का भी चारबाग स्टेशन के करीब मेला लगा हुआ था, हमको भी "हमदम" की तरफ से हुक्म मिला कि घटनास्थल की सची रिपोर्ट लाकर फौरन 'हमदम' के हवाले करो। हम दफ्तर से उठकर थोड़ी ही देर के बाद उस "इन्सानों की लहरें मारते हुए समुन्दर" में एक बूँद की तरह शामिल हो गये। काली झण्डियों से अन्धेरा छाया हुआ था और "गो बैक साइमन" की सिरचढ़ी आवाज से जमीनो-आसमान हिलता हुआ दिखलाई दे रहा था। एक तरफ तो भीड़ की यह हालत थी और दूसरी तरफ पुलिस के लाल पगड़ीवाले पैदल और सवार भीड़ को आगे बढ़ने की कोशिश से रोकने—बलिक पीछे भेजने में लगे हुए थे। मतलब यह कि इसी समुन्दर में हम भी थपेड़े खा रहे थे कि, खुदा जाने कमीशन आ गया उसके आते ही एक खलबली-सी मच गई। पुलिसवाले मजमे पर झपटे और मजमे के बहुत-से लोग एक दूसरे पर गिरने लगे। इस तूफान का सबब मालूम करने का होश ही किसे था? हम भी बिला वजह सिर पर पैर रखकर भागे, मगर भागते किधर? हर तरफ इन्सान ही इन्सान थे, जो भागने तक की जगह न देते थे। बहरहाल किसी पर गिरे और किसी को अपने पर गिराया, याने इस तरह भीड़ में से निकल जाने की कोशिश कर रहे थे। उधर पं० जवाहरलाल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नेहरू भागते हुए को डटे रहने का उपदेश दे रहे थे; ललकार-ललकार कर कह रहे थे कि यही वक्त जांनिसारी का है। मगर हमको तो साहब, अपनी जान प्यारी थी। अपने लिये न सही, मगर 'उनके' (!) लिये तो बस हमीं इकलौते पति थे, फिर भला हम क्यों न भागते!

हाँ, साहब भागे, मगर क़िस्मत का लिखा पूरा होकर ही रहता है। हम भाग रहे थे कि पीछे से किसी ने हमारे ऊपर एक डण्डा रसीद किया, जो इत्तिफ़ाक से हमारे भागते हुए पैरों में से एक पर पड़ा, और सच पूछिये तो अपनी बेगम साहबा के पुण्य-प्रताप से हम बाल-बाल बच गये। अब हम एक दरख्त के करीब पहुँचकर जरा अपना पैर सहला रहे थे कि एक घुड़सवार लाल पगड़ीवाले ने कुछ हमारी शान में गुस्ताख़ाना अलफाज कहने के बाद इस जोर से बल्लम रसीद किया कि हमने आँखें बन्द करके फौरन कलमा पढ़ लिया और अपने शहीद हो जाने का यकीन करके निश्चिन्त हो गये। लेकिन आँख खोलने के बाद मालूम हुआ कि वह बल्लम दरख्त पर इस तरह से पड़ा था कि हम साफ बच गये थे लेकिन जनाब, इस धक्के के बाद जो भागे हैं तो पीछे मुड़कर भी न देखा कि क्या हो रहा है और दफ्तर में आकर ही दम लिया।

ग़ालिबन हमारे पिटने का यह वाक़या तो राष्ट्रीय दृष्टि से शर्म का बायस है, लेकिन हमारी अपनी निगाह से तो कुछ कम बहादुरी की बात नहीं। अगर वह बल्लम दरख्त पर न पड़कर हम पर पड़ता तो आज हमको भी वही दरजा हासिल हुआ होता जो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जनाव लाला लाजपतराय को हासिल हुआ था, लेकिन उसके बाद की घटनायें राष्ट्रीय और नैतिक, दोनों दृष्टियों से हमारी शराफत पर पानी फेर देने के लिये काफी हैं। मजबूर हैं कहने के लिये! वादा कर चुके हैं इसलिये कहे देते हैं।

एक मरतबा हमारे एक दोस्त से इसी किस्म की झाड़-झपट हो गई। उन दोस्त का नाम बताने में जरा हमारी तौहीन होती है। खैर! मतलब तो सिर्फ वाक़या बयान करने से है क़िस्सा असल में यह था कि हमारे वह दोस्त जरा-जरा-सी बात पर खफा होकर बहुत से ऐसे वाक़या दुहराने शुरू कर देते थे जो हमारे लिये नश्तर का काम दे जाते थे। लेकिन उस भले आदमी को न जाने क्या मजा आता था, कि लड़ाई तो हुई आम के बारे में और दुखड़ा रोना शुरू किया इमली का! एक दिन क्या हुआ कि वह चन्द दोस्तों के सामने अपनी क़ाबलियत बघार रहे थे। इत्तफ़ाक़ से हम भी जा पहुँचे और लगे उनकी क़ाबलियत का भण्डा फोड़ने। उस वक्त तो पहलू बदल कर चुप हो गये, मगर दोस्तों के चले जाने पर हम पर बरस पड़े। बोलेः—

"मैं आपसे मिलना नहीं चाहता।"

"क्यों?"—मैंने पूछा।

"आपको आये-गये लोगों का भी खयाल नहीं, तो आप मेहरबानी करके मुझे माफ करें। खुद आपकी खैर कोई पोजीशन है नहीं, लेकिन आप दूसरों की पोजीशन का भी खयाल नहीं रखते। मैं आपकी दोस्ती से बाज आया।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अब आप ही बतलाइये कि उनके ये शब्द कितने चुभनेवाले थे चूँकि गलती हमारी थी इसलिये हमने जरा जब्त से काम लेकर कहा—"जनाब, मुझे नहीं मालूम था कि आपको नाजुक तबीयत को मेरा मजाक इतना बुरा मालूम होगा। अगर आप नहीं मिलना चाहते तो बिसमिल्लाह !

वे—आज आपने यह कोई नयी बात नहीं की है, बल्कि अब तो यह आपकी आदत होती जाती है, और अगर यही हाल है तो इन्शा अल्लाह, मैं क्या कोई भी आपको मुँह लगाना पसन्द न करेगा।

मैं—बन्दानिवाज, माफ़ कीजियेगा। आपकी तरह कोई उजबक नहीं है। रह गये आप, सो मैंने खुद कान पकड़े कि आपसे कभी न मिलूँगा।

वे—अब आप कहलवाते हैं तो सुनिये; आपके तमाम दोस्त, जिनसे जरा भी शराफत छू गयी है, आपसे बेज़ार हैं और कोई आपसे मिलना भी पसन्द नहीं करता। वाक़ई, इस लौंडपने को कोई कहाँ तक बरदाश्त करे !

मैं—मेरा लौंडपन आपकी खरदिमाग़ी से फिर भी अच्छा है। मालूम नहीं, आपको किस बात पर इतना नाज है। अगर कुछ होते, तो खुदा जाने क्या करते; कुछ न होने पर तो यह हाल है !

वे—मैं इस किस्म की बदतमीजी की बातें सुनना नहीं चाहता।

मैं—मैं आप जैसे बदतमीजों से बात करना भी नहीं चाहता।

वे—आप अपनी जबान रोकिये, वरना इस गुस्ताखी का मजा चखा दूँगा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैं—मैं आप जैसे बदतमीजों से बात करना भी नहीं चाहता।

वे—आप अपकी जबान रोकिये, वरना इस गुस्ताख़ी का मजा चखा दूँगा।

मैं—होश में आओ—हद से न बढ़ो, वरना यह तमाम अकड़ धरी रह जायगी।

वे—(चिल्लाकर) चुप रह......बदतमीज कहीं का......

मैं—खामोश......बेहूदा...बदतमीज कहीं का......

इसके बाद पहले वे कुरसी से खड़े हुए और उनके बाद हम! सबसे पहले तो बीच में रखा हुआ हुक्का गिरा, उसके बाद हम और वह भिड़ गये। हमको यह मालूम था कि हम कमजोर हैं, दुबले पतले हैं और वे हाथ पैर के अच्छे थे, लेकिन गुस्से में इन बातों के सोचने का मौका नहीं मिलता। इसलिये हमने मेज से कुर्सी और कुर्सी से आराम कुर्शी पर गिरना शुरू किया, लेकिन हर मरतबा गिरने के बाद इस जोशोखवाश के साथ खड़े होते थे कि अबकी या तो हम नहीं या वह नहीं! लेकिन सच है, कमजोरी मार खाने की निशानी है! आखिर उन्होंने हमको मसहरी पर गिराकर एकाध ऐसा घूसा रसीद किया कि हमको जवाबी घूँसे का होश नहीं रहा और हमने उनके घुटने से दबे हुए सीने से बमुश्किल आवाज निकाल कर कहा—

"यह शराफ़त है...कमीना,...शोहदा...बदमाश, लुच्चा, उल्लू, गधा, पाजी......

और उसके बाद उन्होंने जब हमको छोड़ा तो हम मुकाबले

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर नहीं आये, बल्कि निहायत जोश के साथ तनतनाते हुए उनके कमरे से निकल गये।

इस घटना के दो महीने बाद तक हमलोग आपस में नहीं मिले। लेकिन यह घटना आज हमारी कलम से निकली है, वरना उसी दिन जब घर में सब लोगों ने फटे हुए कपड़े और चोटें देखीं और सबब पूछा तो हमने कह दिया था कि एक पागल कुत्ता लिपट गया था, खैरियत यह हुई कि हम गिरे नही और उसने हमारे कपड़े नोचे; गनीमत यह हुई कि कहीं उसका दाँत नहीं गड़ा, वरना आजतक भुवाली की हवा खाते होते। यह रहस्य आजतक हमारी जबान से बाहर नहीं निकला। लेकिन आज मैं कलम से निकाल रहा हूँ; अब चाहे हमको कोई जलील समझे। या कमीना !

एक मरतबा रेल में हमारी शामत आयी, और वह इस तरह, कि हम लखनऊ से भूपाल जा रहे थे। सुबह जब लखनऊ झाँसी एक्सप्रेस से उतरकर दिल्ली-बम्बई एक्सप्रेस पर बैठे तो बड़ी भीड़ थी। एक तो तीसरे दरजे में कशमश होती ही है, लेकिन उस दिन और दिनों से भी कुछ ज्यादा भीड़ थी, और मुसाफिर इस तरह बैठे हुए थे कि एक के ऊपर एक सवार था, लेकिन हमको बड़ी उमदा जगह मिल गयी थी और हम बड़े मजे में सफर कर रहे थे। बीना जंक्शन पर गाड़ी के ठहरते ही हमारी जो कम्बख्ती आयी तो टांगें सीधी करने के लिये प्लेटफार्म पर आ गये और उस वक्त तक टहलते रहे जब तक गाड़ी ने सीटी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नहीं दी। लेकिन अब जो हम गाड़ी में आकर देखते हैं तो हमारी जगह पर एक और साहब निहायत इतमीनान के साथ तशरीफ रखे हुए थे। उनका इतमीमान देखने लायक था। वे इस तरह बैठे हुए थे, गोया यह जगह उन्हीं की थी और हम जबर्दस्ती या उनकी इनायत से वहाँ बैठे हुए थे! उन्होंने हमको देखते ही निहायत लापरवाही से खिड़की के बाहर झाँकना शुरू कर दिया। हमने समझा कि शायद ये हवा खाने के लिये आ बैठे हैं, अभी उठ जायँगे। लेहाजा हमने मारे शराफत के उनसे उठने का तकाजा भी नहीं किया और चुप खड़े रहे। लेकिन वे उठने का नाम ही न लेते थे, यहाँ तक कि हमको खड़े-खड़े आध घण्टा हो गया। जब हमने देखा कि इनका इतमीनान वैसा ही कायम है और ये जगह छोड़ने का नाम ही नहीं लेते तो हमने उनसे अर्ज किया—

"अब उठिये जनाब, मैं बैठूँगा।"

उन्होंने निहायत लापरवाही से जवाब दिया—"उधर बैठ जाओ।"

हम—आप ही न वहाँ चले जायें; मेरा तो सामान वगैरह रखा है।

वे—सामान रखा है तो हम क्या करें?

हम—अरे भाई, यह तो मेरी जगह है।

वे—क्या तुमने यह जगह खरीदी है जो तुम्हारी जगह है? अब हम बैठे हैं, तुम वहाँ बैठो।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हम—यह तो अच्छी जबर्दस्ती है।

वे—जबर्दस्ती काहे की ? क्या हमने टिकट नहीं लिया है ?

हम—कौन कहता है कि तुमने टिकट नहीं लिया है ?

वे—खैर, हम तो नहीं हटेंगे।

हम—हटोगे कैसे नहीं !

वे—अच्छा, देखते हैं, तुम हटा लेते हो।

हम—नहीं हटोगे ?

वे—नहीं !

हम—क्यों अपनी शामत बुलाते हो, हम फिर कहते हैं, हट जाओ।

वे—कह तो दिया, हम नहीं हटेंगे।

हम—तुम नहीं हटोगे ?

वे—हाँ, नहीं हटेंगे।

अब हमको बड़ा ताव आ रहा था और हम मारे गुस्से के काँप रहे थे। उस वक्त अगर बस चलता तो उस बदतमीज को मारते-मारते फर्श कर देते, मगर क्या करें, सफर का मामला था और हम अकेले थे, लेकिन चुप हो रहना भी कोई माने नहीं रखता था। हमने फिर कहा—

"तुम नहीं हटोगे ?"

"नहीं—नहीं—नहीं।"

अब जब्त हमारे अख्तियार में न था। हमने उसका हाथ पकड़ कर उठाना चाहा तो उसने ढकेल दिया और हम सामने-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वाली सीट के मुसाफ़िरों पर गिर पड़े। लेकिन उठकर हमने फिर उसका हाथ पकड़ा और अपनी पूरी ताकत के साथ झटका देकर खींचा, लेकिन उसने दूसरे हाथ से हमारे मुँह पर तड़ से वह चाँटा रसीद किया कि हमारी आँखों के सामने—

"चमकने से जुगनू के था वह समा
हवा पर उड़ें जैसे चिनगारियाँ।"

वाला नजारा आ गया और मालूम हुआ कि जैसे हम सिनेमा देख रहे थे और यह फिल्म जल जानेवाला अंधेरा और रोशनी थी, लेकिन दो ही तीन सेकेण्ड के बाद हम फिर उस बदमाश पर झपटे, और खुदा की कसम, अगर दूसरे मुसाफिर बीच में न आ जाते तो उस नालायक को मारते मारते उत्तू कर देता। लेकिन हमको हमारे हमसफरों ने ऐसे घेरा कि हम गालियां तो देते रहे लेकिन हाथ न हिला सके।

इन तीन वाकयात के बाद बाहर का तो कोई ऐसा वाकया याद आता नहीं, लेकिन घर में यह इत्तफाक हुए हैं, मसलन् शादी ही में फूलों की छड़ियों से पिटे थे। लेकिन हम इन वाकयात पर रोशनी डालना खिलाफ मसलहत समझते हैं; इसलिये कि अब हम ऐसे भी गये गुजरे नहीं हैं। अरे हाँ !!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बुरे फँसे

आपने अपने शहर से दूसरे शहर तक कई दफे सफर किया होगा और कई बार तजुर्बा हुआ होगा कि किसी दोस्त ने कहा, "भाईजान, मंज़िले मक़सूद पर जाकर यह चिट्ठी मेरे फलाँ दोस्त तक पहुँचा दीजियेगा या अच्छे आमों की एक टोकरी आपके हवाले कर दो और कहा कि वहाँ जाकर मेरे चचा के घर पहुँचा दीजियेगा। लेकिन ऐसा कभी न हुआ होगा कि किसी दोस्त ने कहा, "हज़रत यह दो बकरियाँ लेते जाइये और फलाँ शख्स तक पहुँचा दीजिये।"

यह मामला हमारे साथ हुआ। हम मुलतान जा रहे थे कि हमारे एक दोस्त ने कहा, "तकलीफ तो होगी, लेकिन अगर आप मेरी दो बकरियाँ हरम दरवाजे में शेख अल्लाबख्श के यहाँ पहुँचा दें तो ममनून एहसान मानूगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हम बकरियों का नाम सुनकर बौखला-से गए, लेकिन हमें इस दोस्त का कहना जरूर मानना था, इसलिए जवाब दिया, "भाई मुझे इससे इनकार तो नहीं हो सकता लेकिन मुश्किल यह है कि इन्हें स्टेशन तक पहुँचाने का क्या बन्दोबस्त होगा? कोई कोचवान तो उन्हें तांगे पर बिठा कर ले जाने से रहा, बाकी रहे बसवाले, वह भी सिर्फ दो टांगों वाले हैवानों को सवार होने की इजाजत देते हैं इसलिए अगर आप बकरियाँ स्टेशन तक पहुँचा दें तो इनायत होगी।"

हमारे दोस्त हमें यह रिआयत देने पर रजामन्द हो गए और अगले रोज सुबह हम और बकरियाँ स्टेशन पर पहुँच गए बकरियों को बुक कराया गया। और रेलवेवालों ने हरेक बकरी के गले में तागा बाँधकर एक टिकट लटका दिया। हम बकरियें लिए हुए प्लेटफार्म पर पहुँच गए और एक जगह खड़े होकर रेल और रेल के उस मुलाजिम का इन्तजार करने लगे जिसका फर्ज बकरियों को गार्ड के ब्रेक में बैठाना था।

अब करना खुदा का यह हुआ कि सिगरेट सुलगाते वक्त हमारे हाथ से बकरियों की रस्सियाँ छूट गईं। और एक बकरी एक पान सिगरेट बेचनेवाले के खोमचे पर झपट पड़ी और हटाते हटाते चन्द पान उठा ही तो ले गई। दूकानदार ने चिल्लाना शुरू कर दिया। और बकरी खमोशी के साथ पान खाने लगी। वह ऐसी निगाह से पान-फ़रोश की तरफ देख रही थी कि गोया कह रही है—क्यूँजी आप खफा क्यूँ होते हैं? जब इन्सान मुँह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में पान रखकर बकरी की तरह जुगाली करता है तो बकरी इन्सान की तरह पान क्यूँ न खाय ? और जब इन्सान हमारी खूराक, मसलन, शलगम, मूली, साग पात पर हाथ साफ करता है तो हम इंसान को मन भाती खूराक यानी पान पर क्यूँ दाँत तेज़ न करें ?

पान फ़रोश पिनपिनाता हुआ ज़मीन पर गिरे हुए पान उठा उठाकर खोमचे में रख रहा था। और हम बकरी की तरफ देखकर मुस्करा रहे थे। हम हैरान थे कि कत्थे चूने के बग़ैर पान खाना क्या माने ? कम्बख्त बकरी, अगर तुझे पान ही खाना था तो कत्था चूना लगे हुए पान उठाती। हमने दो पैसे निकाल कर पान फ़रोश की तरफ फेंके और कहा—कि बकरी के मुँह में कत्था चूना और छालियाँ डाल दो। इस पर पान-फरोश बहुत बिगड़ा और हमारे करीब आकर बोला—"बाबूजी मेरे पानों के पैसे दिला दीजिये।" उसका हमारी तरफ बढ़ना था कि दूसरी बकरी उसके खोमचे पर झपटी। पान-फरोश ने घूमकर उसके थूथनों पर एक थप्पड़ रसीद किया और उसे हमारी तरफ धकेल दिया। लेकिन इस अरसे में पहली बकरी पान खतम कर चुकी थी। इसलिए जब पान फरोश दूसरी बकरी को धकेलने में मसरूफ था तो पहली फिर खोमचे की तरफ बढ़ी। खोमचेवाले ने शोर मचाते हुए दोनों हाथों से इस तरह उन्हें धकेलना शुरू किया कि वह भाग उठीं, लेकिन एक ही तरफ को नहीं बल्कि प्लेटफार्म के उस तरफ को जिस तरफ से डाउन ट्रेन आती है। और दूसरी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तरफ को जिस तरफ से अपट्रेन आती है। हमारे हाथ से सिगरेट गिर गया। हम बकरी की तरफ बेतहाशा भागे और भागते वक्त डाउन-बकरी की तरफ इशारा करके एक कुली से कह दिया—कि इसे पकड़ लाओ एक आना देंगे।

अब आगे-आगे बकरी और पीछे-पीछे हम। चलाचल चलाचल हम ह्वीलर के बुकस्टाल से आगे निकल गए और बकरी हमारे हाथ में आया ही चाहती थी कि उसकी टक्कर एक चाय-फरोश की टांगों से हो गई, जो सर पर खोमचा उठाए हुए इसी तरफ को जा रहा था जिस तरफ हम। यानी हमारी तरफ उसकी पीठ थी। चाय-फरोश इस ग़ैबी घूँसे से ऐसा घबराया कि ख़ोमचा उसके सर पर से फ़र्श पर आ रहा। चाय का देकचा लुढ़कता हुआ प्लेटफार्म से नीचे लाइन पर जा गिरा। और मिट्टी की प्यालियाँ चूर-चूर हो गईं। लेकिन चाय-फरोश को यह मालूम करने से पहले कि यह क्या वाक़या गुजरा है, यह फिकर हुई कि अपने पैसे चुने जो फर्श पर बिखर गए थे।

हमने बकरी को थामा। और चाय-फरोश ने हमें पकड़ा कि बाबूजी हमारे नुकसान का हर्जाना दो। इर्द-गिर्द लोग जमा हो गए। और सब आदमी शामिल होकर कहने लगे कि बाबू साहब आपको पैसे देने चाहिये। चाय फरोश बेचारा ग़रीब आदमी है। हम चाहते थे कि किसी तरह मुआमला टल जाय। लेकिन ऐसा न हो सका। और उससे कहा—कि आओ हमारे साथ।

अब डाउन-बकरी का हाल सुनिए। हम जब अप-बकरी को

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लिए जा रहे थे तो सामने से कुली डाउन-बकरी को पकड़े आ रहा था। लेकिन साथ एक टिकट कलक्टर भी था। जब हमारा उनका क्रास हुआ, तो हम ठहर गए। और गुस्से में भरा हुआ टिकट कलक्टर लगा डैम फूल कहने। हमने पूछा—"साहब क्या मामला है।" साहब बहादुर बोले—"डैम यू। ये टुमारा बकरी अमारे डफ्टर में आ गया और टेबिल पर चढ़ गया। सब डवात उलट गया और हमारा रजिस्टर ख़राब हो गया। हम टुमको स्टेशन मास्टर के पास ले जाना मांगटा है, मालूम?" हमने अपने इर्द-गिर्द निगाह दौड़ाई। चार कर्ज़ख्वाह हमें घेरे खड़े थे। चायफरोश, पानफरोश, कुली और टिकट कलक्टर। हमने पहले तीन आदमियों को मुँहमाँगे दाम देकर रुखसत किया। और बकरियों की रस्सियाँ थामते हुए साहब बहादुर से मजबूरी तलब की। पहले तो मानते ही न थे। लेकिन आखिर-कार एक दो शरीफ आदमियों ने जो पास ही खड़े थे, सिफारिश करके हमारी जान छुड़ाई। इतने में ट्रेन आई और रेलवे के खास रिपोर्टर ने आकर बकरियों को गाड़ी में सवार किया। हम कुछ अरसे तक वहीं खड़े रहे और हमने देखा कि अप-बकरी ने डाउन बकरी का टिकट खा लिया। और डाउन-बकरी अप-बकरी का टिकट चबा गई। हमने चाहा कि भागकर बुकिंग वाले दफ्तर में इत्तिला करें। लेकिन गाड़ी ने व्हिसिल किया और हम भाग कर एक डिब्बे में घुस गए। गाड़ी चल पड़ी।

रायवंड के स्टेशन पर हमको गाड़ी बदलनी थी। चुनांचे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हम उतरे और बकरियाँ भी उतरीं। चन्द मिनट के बाद एक टिकट कलक्टर साहब टहलते-टहलते करीब आए और बोले—"बकरियों के टिकट कहाँ हैं ?" हमने कहा,—इनके पेट में।" बाबू साहब समझे कि हम मखौल कर रहे हैं। इसलिए लाल-पीले होकर बोले—"चार्ज करेंगे, इधर लाओ इन्हें दफ्तर की तरफ। हमने अर्ज किया कि—"हुजूर हमने आपसे मजाक नहीं किया—टिकट बकरियों के पेट में है। अगर यकीन न हो तो इनका एक्सरे करा देखिए।" इस पर बाबू साहब और भी चुकन्दर हो गए। और लगे गार्ड को आवाजें देने। गोया एक मददगार बुलाकर हमें पीटना चाहते थे। गार्ड आया उसने शहादत दी कि बकरियाँ बुकशुदा हैं और मेरी किताब में दर्ज है।

टिकट कलक्टर साहब इत्मीनान से एक तरफ को चल दिये। और हम सिगरेट सुलगाने लगे, कि गाड़ी ने बड़े जोर से व्हिसिल किया, जिससे डर कर बकरियाँ फिर भाग उठीं। और हमारे सामने फिर वही अप और डाउन का मामला पेश हुआ। लेकिन इस दफा हमने खुद पीछा न करने का फैसला कर लिया और दो कुलियों से कहा,—"कि भाई ! इन्हें पकड़ लाओ और पैसे ले लो। एक-एक आना देंगे।" बकरियाँ फिर हमारे पास लाई गईं। लेकिन अब की हम ऐसे परेशान हुए कि अगर छुरी पास होती तो दोनों को आने वाली ईदुलसहो के सिलसिले में पहले से ही जिबह करके खुदा पर एहसान करते लेकिन हम बेबस थे। आखिर हमें एक ख्याल सूझा। हमारे शहर के एक बाशिन्दे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यहाँ टिकट कलक्टर थे। हम बकरियाँ लिए हुए इनके पास पहुँचे—"और कहा कि काज़ी साहब ! ये लीजिए दो बकरियाँ। इन्हें अपने पास रखिये। लाहौर से कोई आदमी हमारी चिट्ठी दिखा कर इन्हें ले जायगा। काज़ी साहब रजामन्द हो गए। और हमें इन बकरियों से यों नजात मिली।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह रूठ गईं !

मैं एक मियाँ हूँ। सीधा और सच्चा ! अपनी बीबी रौशन आरा को अपनी ज़िन्दगी की हर बात से आगाह रखना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ और हमेशा से उस पर अमल भी करता आ रहा हूँ।

चुनांचे मेरी 'वह' मेरे तमाम दोस्तों की आदतों और चाल चलन से अच्छी तरह वाक़िफ़ हैं जिसका नतीजा यह है कि मेरे दोस्त जितने मुझको अच्छे लगते हैं उतने ही रोशन आरा को बुरे ! मेरे दोस्तों की जिन अदाओं ने मुझे अपना बना रखा है, उन्हें मेरी 'वह' एक भले आदमी के लिये ज़िल्लत का सबब समझती हैं। आप कहीं यह न समझ लें कि खुदा नख्वास्ता वह कोई ऐसे आदमी हैं जिनका ज़िक्र किसी के सामने न किया जा सके लेकिन कुछ अपने हुनर की बदौलत और कुछ इस ख़ाकसार की सोहवत की वजह से सबके सब सफ़ेद पोश हैं। लेकिन इस बात

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

को क्या करूँ कि उनकी दोस्ती मेरे घर के आराम में एक तूफ़ान सी मचाये रहती है।

मसलन् मिरज़ा साहब ही को लीजिये। अच्छे ख़ासे भले आदमी हैं, हालाँ कि जंगल के मुहकमे में एक अच्छे ओहदे पर विराजमान हैं लेकिन शक्लो-सूरत ऐसी पाई है कि बस, मसजिद के पीर ही मालूम होते हैं। जुआ वह नहीं खेलते, गुल्ली-डण्डे का उनको शौक़ नहीं ! जेब कतरते हुए कभी वह नहीं पकड़े गये ! अलबत्ता कबूतर पाल रखे हैं। उधर बीबी साहबा की यह हालत है कि मुहल्ले का कोई बदमाश जुए में क़ैद हो जाये तो उसकी माँ के पास मातम पुर्सी तक को चली जाती हैं। गुल्ली-डण्डे में किसी की आँख फूट जाये तो मरहम-पट्टी करती रहती हैं। कोई जेब कतरता पकड़ा जाये तो घण्टों आँसू बहाती रहती हैं लेकिन वह बुजुर्ग जिनको दुनिया भर की ज़बान 'मिर्ज़ा साहब'—'मिर्ज़ा साहब' कहते थकती है, हमारे घर में "मुआ कबूतर बाज़" के नाम से याद किये जाते हैं। कभी भूल से भी आसमान की तरफ़ नज़र उठाकर किसी चील, कौव्वे, गिद्ध, शिकरे को देखने लग जाऊँ तो रौशन आरा को फौरन ख़याल हो जाता है कि बस, अब यह कबूतरबाज़ बना।

इसके बाद मिरज़ा साहब की शान में एक क़सीदः याने गालियों की बौछार शुरू हो जाती है ! एक दिन जब ऐसी परिस्थिति उपस्थित हुई तो मैंने पक्का इरादा कर लिया कि उस मिर्ज़ा कम्बख़्त को कभी पास न फटकने दूँगा। आखिर घर भर भी तो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कोई चीज़ है। मियाँ-बीबी के आपस के प्रेम के सामने यार-दोस्तों की क्या हक़ीक़त है। चुनांचे हम गुस्से में भरे हुए मिरज़ा साहब के घर गये। दरवाज़ा खटखटाया, कहने लगे, अन्दर आ जाओ! हमने कहा—"नहीं आते"। तुम बाहर आओ! ख़ैर, आख़िर अन्दर गया। बदन पर तेल मलकर एक कबूतर की चोंच मुँह में लिये धूप में बैठे थे। कहने लगे कि हमने कहा—"बैठेंगे नहीं!" आखिर बैठ गये।

मालूम होता है कि हमारे तेवर कुछ बिगड़े हुए थे। मिरज़ा बोले—भई, खैरियत तो है?

मैंने कहा—"कुछ नहीं"।

कहने लगे—इस वक़्त कैसे आना हुआ?

अब मेरे दिल में फ़िक़रे खौलने शुरू हुए। पहले इरादा किया कि एकदम ही सब कह डालो और चल दो! फिर सोचा कि मज़ाक़ समझेगा। इसलिये किसी ढंग से बात शुरू करो! लेकिन समझ में नहीं आया कि पहले क्या कहें! आखिर हमने कहा—"मिरज़ा, भई कबूतर बहुत मंहगे होते हैं"।

यह सुनते ही मिरज़ा साहब ने चीन से लेकर अमेरिका तक के तमाम कबूतरों को एक एक करके गिनवाना शुरू किया। इसके बाद दाने की मंहगाई के बारे में बकते झकते रहे। उस दिन तो हम यों ही चले आये लेकिन अभी खटपट का इरादा दिल में बाकी था।

एक दिन क्या हुआ कि शाम को घर में हमारी सुलह हो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गई। हमने कहा—चलो अब मिरजा के साथ बिगाड़ करने से क्या फ़ायदा? चुनांचे दूसरे दिन मिर्जा से भी हमारी सुलह हो गई।

लेकिन मेरी जिन्दगी बदमज़ा करने के लिये रोजाना एक न एक दोस्त आ ही जाते हैं। ऐसा मालूम होता है मानों मुझमें कुछ गोंद-सा लगा हुआ है या मैं चुम्बक पत्थर हूँ कि लोग खुद बखुद खिंचे चले आते हैं।

शादी के पहले हम कभी कभी १० बजे सोकर उठा करते थे। वरना ११ बजे! अब कितने बजे उठते हैं? इसका अन्दाजः वही लोग लगा सकते हैं जिनके घर नाश्तः सुबह ७ बजे करा दिया जाता है। और अगर हम कभी तड़के उठने में सुस्ती दिखायें तो यह कह दिया जाता है कि "यह सब निगोड़े नसीम की सोहबत का नतीजा है। एक दिन सुबह हम नहा रहे थे। सर्दी का मौसम, हाथ पांव कांप रहे थे। साबुन सर पर मलते थे तो नाक में घुसता था।

इतने में हमें जो उमंग आई तो गुसलखाने में अलापना शुरू कर दिया—"तोरी छलबल है न्यारी, तोरी कलबल है न्यारी.........."इसको हमारी बदमज़ाक़ी समझिये या बेवक़ूफ़ी या अक्लमन्दी। लेकिन इन सबका क़ुसूरवार ठहराये गये, पंडित श्यामाचरणजी हमारे दोस्त को!

लेकिन हाल ही में मुझ पर एक ऐसी घटना घटी कि मैंने तमाम दोस्तों को छोड़ देने की क़सम खा ली है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तीन चार दिन का जिक्र है कि सुबह के वक्त रौशन आरा ने मुझसे मैके जाने के लिये इजाज़त मांगी। जब से हमारी शादी हुई है। रौशन आरा सिर्फ दो बार मैके गई है। साथ ही उसने मुझसे कुछ इस सादगी और नम्रता से कहा कि इन्कार न कर सका। कहने लगी—"तो फिर मैं डेढ़ बजे की गाड़ी से चली जाऊँ ? मैंने कहा और क्या ?

वह झट तैयारी में लग गई। और मेरे दिमाग़ में आजादी के खयालात ने चक्कर लगाने शुरू किये । याने अब बेशक दोस्त आयें। बेशक ऊधम मचायें, मैं बेशक गाऊं, बेशक जब चाहूँ उठूं! बेशक थियेटर जाऊं। मैंने कहा—रौशन आरा, जल्दी करो, नहीं तो गाड़ी छूट जायगी। साथ स्टेशन गया। जब गाड़ी में सवार करा चुका तो कहने लगी" खत जरूर लिखते रहना। मैंने कहा—" हर रोज और तुम भी !"

"खाना वक्त पर खा लिया कीजिये ! और हां, धुले हुए मोजे और रुमाल अलमारी के निचले खाने में पड़े हैं"।

इसके बाद हम दोनों खामोश हो गये और एक दूसरे के चेहरे को देखते रहे, उसकी आंखों में आंसू भर आये। मेरा दिल भी बेताब होने लगा। और जब गाड़ी रवाना हुई तो मैं देर तक एक अजीब हालत में कुछ खोया सा प्लेट फार्म पर खड़ा रहा। अन्त में धीरे-धीरे कदम उठाता हुआ किताबों की दूकान तक आया और मासिक पत्रिकाओं के पन्ने उलटने लगा। तसवीरें देखीं, लेख और कविताओं की हेडिंग पढ़ी लेकिन सब

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

 Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कुछ भूलता गया ! आखीर में एक अखबार खरीदा, तह करके जेब में डाला और आदत के अनुसार घर का इरादा कर लिया।

फिर खयाल आया कि घर जाना जरूरी नहीं रहा ! अब जहां चाहूँ, जाऊं ! चाहूँ तो घण्टों स्टेशन पर ही टहलता रहूँ। दिल चाहता था, कलाबाजिया खाऊं !

कहते हैं, जब अफ्रीका के जंगलियों को किसी सभ्य देश में कुछ दिनों के लिये रखा जाता है तो जब तक वह वहां रहते हैं तब तक तो बहुत रिजर्व होकर रहते हैं लेकिन जब वापस जंगल में पहुँचते हैं तो खुशी के मारे चीखते चिल्लाते हैं। कुछ इसी तरह की हालत हमारे दिल की हो रही थी। भागता हुआ स्टेशन से आजाद होकर बाहर निकला। आजादी के लहजे में तांगे वाले को बुलाया और कूद कर तांगे पर सवार हो गया। सिगरेट सुलगा लिया। टांगे सीट पर फैला लीं और क्लब की ओर रवाना हो गया।

रास्ते में एक बहुत जरूरी काम याद आ गया तो तांगा मोड़ कर घर की तरफ पलटा। बाहर ही से नौकर को आवाज दी।

"अमजद" !

"हुजूर" !

"देखो, हज्जाम को जाकर कह दो कि कल ११ बजे आये !"

"बहुत अच्छा" !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"११ बजे सुन लिया न! कहीं रोज की तरह छः बजे न आ जाये!"

"बहुत अच्छा, हुजूर"।

"और अगर ११ बजे से पहले आये तो धक्के मार कर निकाल दो।"

यहां से क्लब पहुँचे आज तक कभी दिन के दो बजे क्लब नहीं गया था। अन्दर दाखिल हुआ तो सूनसान! आदमी का नाम निशान नहीं। सब कमरे देख डाले। बिलियर्ड का कमरा खाली, शतरंज का कमरा खाली, ताश का कमरा खाली! सिर्फ खाने के कमरे में एक लड़का छूरियां तेज़ कर रहा था। उससे पूछा—

"क्यों बे, आज कोई नहीं आया?

कहने लगा, "हुजूर आप जानते हैं इस वक्त भला कौन आता है?"

बहुत निराश हुआ। बाहर निकल कर सोचने लगा कि अब क्या करूँ? और कुछ न सूझा तो वहां से मिर्जा साहब के घर पहुँचा। मालूम हुआ अभी दफ्तर से वापस नहीं आये हैं। दफ्तर पहुँचा तो मुझे देख कर वह बहुत हैरान हुए। मैंने सब हाल बयान किया! कहने लगे तुम बाहर के कमरे में बैठो, थोड़ा सा काम रह गया है। बस अभी भुगताके तुम्हारे साथ चलता हूँ। शाम का प्रोग्राम क्या है?

मैंने कहा—"थियेटर"!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

 Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

कहने लगे—बस, बहुत ठीक है। तुम बाहर ठहरो मैं अभी आया।

बाहर के कमरे में एक छोटी सी कुरसी पड़ी थी। उस पर बैठ कर इन्तजार करने लगा। और जेब से अख़बार निकाल कर पढ़ना शुरू किया। शुरू से आख़ीर तक सब पढ़ डाला। अभी चार बजने में एक घण्टा बाकी था।

फिरसे पढ़ना शुरू किया। सब इश्तहार पढ़ डाले और फिर सब इश्तहारों को दोबारह पढ़ डाला।

आखिरकार अखबार फेंककर बिना किसी तकलीफ़ या लिहाज़ के जमुहाइयां लेने लगा। जमुहाई पर जमुहाई, जमुहाई पर जमुहाई। यहां तक कि जबड़ों में दर्द होने लगा।

उसके बाद टांगें हिलाना शुरू किया लेकिन इससे भी थक गया। फिर मेज़ पर तबले की गतें बजाने लगा। बहुत तंग आ गया तो दरवाजा खोल कर मिर्ज़ा से कहा—अबे यार, चलता भी है या मुझे इन्तज़ार ही में मार डालेगा मरदूद कहीं का। सारा दिन मेरा खराब कर दिया।

वहां से उठ कर मिर्ज़ा के घर गये। शाम बड़े मजे में कटी। खाना क्लब में खाया और वहां से दोस्तों को साथ लिये थियेटर गये। रात के अढ़ाई बजे घर लौटे। तकिये पर सर रखा ही था कि नींद ने बेहोश कर दिया।

सुबह आंख खुली तो कमरे में धूप लहरें मार रही थी। घड़ी को देखा तो पौने ग्यारह बजे थे। हाथ बढ़ा कर मेज़ पर से

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

एक सिगरेट उठाया और सुलगा कर तश्तरी में रख दिया। और फिर ऊंघने लगा—

ग्यारह बजे अमजद कमरे में दाख़िल हुआ। कहने लगा—"हुजूर, हज्जाम आया है"। हमने कहा—"यहीं बुला लो।"

यह ऐश मुद्दत के बाद नसीब हुआ कि बिस्तर में लेटे-लेटे हजामत बनवाएँ। इतमीनान से उठे और नहा-धोकर बाहर जाने के लिये तैयार हुए। लेकिन तबियत में वह ताज़गी न थी जिसकी उम्मेद लगाये बैठे थे। चलते वक्त अलमारी में से रूमाल निकाला तो खुदा जाने क्या खयाल दिल में आया। वहीं कुरसी पर बैठ गया और पागलों की तरह उस रूमाल को ताकता रहा। अलमारी का एक और ख़ाना खोला तो सुरमई रंग का एक रेशमी दुपट्टा नज़र पड़ा। बाहर निकाला। हलकी-हलकी खुशबू आ रही थी। बहुत देर तक उस पर हाथ फेरता रहा। दिल भर आया। घर सूना मालूम होने लगा। बहुतेरा अपने आपको सम्भाला। लेकिन आंसू टपक पड़े। आंसुओं का गिरना था कि बेताब हो गया, लेकिन न मालूम क्या-क्या याद आया कि और भी बेक़रार होता गया।

आख़िर न रहा गया। बाहर निकला और सीधा तार घर पहुँचा। वहां से तार दिया कि मैं बहुत उदास हूँ। तुम फौरन आ जाओ। तार देने के बाद कुछ इतमीनान हुआ। यक़ीन था कि रोशनआरा अब जिस क़दर जल्द हो सकेगा आ जायेगी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इससे ढारस-सी बंध गई। और दिल पर से जैसे एक बोझ हट गया।

दूसरे दिन दोपहर को मिरज़ा के मकान पर ताश का अड्डा जमना था। वहाँ पहुँचे तो मालूम हुआ कि मिरज़ा के पिताजी से कुछ लोग मिलने आये हैं। इसलिये तजवीज़ यह ठहरी कि यहाँ से किसी और जगह सरक चलो। हमारा मकान तो खाली था ही। सब यार लोग वहीं जमा हुए। अमजद से कह दिया गया कि हुक्के में अगर जरा भी देर हुई तो तुम्हारी खैर नहीं और पान इस तरह पहुँचते रहें।

अब इसके बाद की परिस्थिति को कुछ मर्द ही अच्छी तरह समझ सकते हैं। प्रारम्भ में तो ताश का खेल बाक़ायदा और सही तौर पर होता रहा, जो खेल भी खेला गया बहुत ईमानदारी और ठीक तरह से क़ायदे के साथ खेला गया। लेकिन एक दो घण्टे के बाद कुछ खुशदिली और मज़ाक़ शुरू हो गया। यार लोगों ने एक दूसरे के पत्ते देखने शुरू कर दिये। यह हालत थी कि आँख बची नहीं और एक आध काम का पत्ता उड़ा नहीं। और साथ ही क़हक़हे पर क़हक़हे उड़ने लगे। तीन घण्टे के बाद यह हालत थी कि कोई घुटना हिला रहा था, कोई गा रहा था, कोई फ़र्श पर हाथ टेके बैठा हुआ सीटी बजा रहा था। कोई थियेटर का एक आध मज़ाक़िया फिकरा लाखों बार दुहरा रहा था लेकिन यह भी ज्यादा देर तक नहीं रहा। धोल-धप्पा शुरू हो गया; उठा-पटक का मज़ाक़ भी होने लगा। इतने में एक मसखरे को जो दूर की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सूझो तो एक ऐसा खेल तजवीज किया जिसके आखीर में एक आदमी बादशाह बन जाता है, दूसरा वजीर, तीसरा कोतवाल, और जो सबसे हार जाता है वह चोर। सबने कहा "वाह वाह" क्या बात कही है। एक बोला—फिर आज जो चोर बना उसकी शामत आ जायगी। दूसरे ने कहा—और नहीं तो क्या ! भला कोई ऐसा वैसा खेल है। सल्तनतों के मामले हैं—सल्तनतों के !

खेल शुरू हुआ। बदक़िस्मती से हम चोर बन गये। तरह-तरह की सजायें सोची गईं। कोई कहता था—"नंगे पाँव भागते हुए जाये और हलवाई की दूकान से मिठाई खरीद के लाये।" कोई कहता था—नहीं हुजूर। सबके पाँव पड़े और हर एक से दो-दो चाँटे खाये ! दूसरे ने कहा—"नहीं साहब, एक पाँव पर खड़ा होकर हमारे सामने नाचे।" अन्त में बादशाह सलामत बोले—"हम हुक्म देते हैं कि चोर को कागज की एक लम्बी नोकदार टोपी पहनाई जाय और उसके चेहरे पर स्याही मल दी जाय और यह उसी हालत में जाकर अन्दर से हुक्के की चिलम भर कर लाये। सबने कहा—"क्या दिमाग पाया है हुजूर ने ! क्या सजा तजवीज की है, वाह वाह !

हम भी मजे में आये हुए थे। हमने कहा—"तो क्या हुआ ? आज हम हैं, कल किसी और की बारी आ जायगी।" हँसते हुए हमने अपने खूबसूरत चेहरे को पेश किया और हँसी-खुशी हमने वह बेहूदी-सी टोपी पहनी। शान के साथ चिलम उठाई और जनानखाने का दरवाजा खोलकर बावर्चीखाने को चल दिये और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हमारे पीछे कमरा कहकहों से गूञ्ज रहा था।

आँगन में पहुँचे ही थे कि बाहर का दरवाजा खुला और एक बुर्क़ापोश नाज़नीं अन्दर दाखिल हुई। मुँह से बुरक़ा उठाया तो रौशन आरा!

मैं भक से रह गया। काटो तो बदन में खून नहीं! जबान तालू से जा लगी। सामने वह रौशनआरा जिसे मैंने तार देकर बुलाया था कि "तुम फौरन आ जाओ। मैं बहुत उदास हूँ।" और अपनी यह हालत कि मुँह पर स्याही मली है, सर पर लम्बोतरी टोपी और हाथ में चिलम उठाये खड़े हैं और मरदाने से कहकहों का शोर मच रहा है।

होश-हवास ने जवाब दे दिया। रौशन आरा कुछ देर तो चुप हो खड़ी देखती रही और फिर कहने लगी.........लेकिन मैं क्या बताऊँ कि क्या कहने लगी? उसकी आवाज तो मेरे कानों तक जैसे बेहोशी के आलम में पहुँच रही थी।

अब तक आप इतना तो जान गये होंगे कि मैं याने मैं खुद बहुत भला आदमी हूँ। जहाँ तक मैं मैं हूँ। मुझसे बेहतर मियाँ दुनिया पैदा कर ही नहीं सकती। मेरे ससुराल में सबकी यही राय है और मेरा अपना विश्वास भी यही है। लेकिन इन दोस्तों ने मुझे रुसवा कर दिया है। इसलिये मैंने पक्का इरादा कर लिया है कि अब या घर रहूँगा या काम पर जाया करूँगा। न किसी से मिलूँगा और न किसी को अपने घर पर आने ही दूँगा। सिवाय डाकिये और हज्जाम के और उनसे भी बहुत कम बातें करूँगा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"खत है ?"

"जी हाँ।"

"दे जाओ—चले जाओ।"

"नाखून काट दो।"

"भाग जाओ"

बस, इससे ज्यादा किसी से बातें ही न करूँगा। आप देखते तो जाइये।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

साड़ी और सूट

बात नई नहीं पुरानी है। शिमले की सड़क पर एक ख़ाली साड़ी आहिस्ता-आहिस्ता चल रही थी याने साड़ी थी पर साड़ी के अन्दर कुछ न था या कम-से-कम यह मालूम हो रहा था कि घरवाली घर में है और साड़ी हवाख़ोरी के लिये तनतनहा घर से निकल पड़ी हैं। ईश्वर जाने साड़ी और साड़ीवाली में तू तू मैं मैं तक की नौबत पहुँची थी और साड़ी तङ्ग आकर निकल पड़ी थी या बेचारी पहननेवाली को घर के काम-काज से छुट्टी नहीं मिलती थी। इसलिये उसने सोचा कि मैं तो मरती ही हूँ, यह बेचारी क्यों मेरे साथ सड़े। ख़ैर, कुछ भी हो किन्तु आँखवालों ने देखा कि साड़ी मौजूद है और साड़ीवाली गायब! उनमें से एक साहब ने हिम्मत करके क़दम बढ़ाया और इधर-उधर देखकर कि कोई ताक में तो नहीं। यह साहब साड़ी के पास जा पहुँचे और टोपी उठाकर क़दम साथ में मिलाने को ही थे कि किसी देवी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शक्ति ने उन हज़रत को सूट से ग़ायब कर दिया और उनका खाली सूट साड़ी के साथ मटरगश्ती करने लगा। इस दैवी शक्ति ने उन्हें सूट और साड़ी की गुफ्तगू समझने की लियाक़त तो दे दी और यह भी मजबूर किया कि यह साड़ी और सूट के पीछे-पीछे चलते रहें मगर और हर तरह की ताक़त उनसे ले ली। जो बातचीत साड़ी और सूट में होती रही वह सुनते रहे और अब आपके सामने यों बयान करते हैं।

सूट—माफ़ कीजिये, मगर जी चाहता है कि आपके साथ सैर का आनन्द उठाऊँ, इनकार न कीजियेगा।

साड़ी—आप साथ-साथ चल ही पड़े मगर मैं सोचती हूँ कि मेरा और आपका साथ क्या ?

सूट—क्यों ?

साड़ी—जनाब, यह बन्दी किसी ग़रीब हिन्दुस्तानी जुलाहे की दस्तकारी का सीधा-सादा नमूना और वह भी ऐसा जिसे भोले-पन से लिपट जाने की आदत और आप माशा अल्लाह, पाश्चात्य सभ्यता की जीती-जागती तस्वीर, चुस्ती-चालाकी का बेहतरीन इश्तहार, चलें तो अकड़ कर, तह हों तो वह भी शिकञ्जे में !

सूट—बनाने में तो आप बड़ी वह मालूम होती हैं।

साड़ी—मैं बनाती हूँ ? क्या, जो कुछ मैं कह रही हूँ ग़लत है ? मुझ ग़रीब को तो आज तक एक जेब भी नहीं मिली और आप हैं कि ऊपर जेब, नीचे जेब, अन्दर जेब, बाहर जेब ! चारों तरफ़ जेब ही जेब !!!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सूट—ख़ाली जेब से जेब न होना अच्छा है।

साड़ी—(जरा तमक कर) जी हाँ, जेब ख़ाली और यह अकड़ फूँ !

सूट—जनाब, यह आपके आंचल का जरा-सा खसकना तो सबके होश उड़ा देता है।

साड़ी—ओ हो, आप तो शायर मिजाज मालूम होते हैं।

सूट—हूँ तो नहीं, मगर बनना पड़ता है।

साड़ी—अच्छा, अब आप ज़बर्दस्ती शायर बनने की कोशिश न कीजिये और कुछ आप बीती कहिये। झूठ चाहे कितना ही दिलचस्प क्यों न हो, सच के सामने हेच है।

सूट—आपकी ऐसी ही आज्ञा है तो मैं कहने को तैयार हूँ वरना अच्छा तो यह है कि आप बीती न कहूँ।

साड़ी—जी नहीं, हम तो जरूर सुनेंगे !

सूट—अच्छा तो सुनिये ! मैं जब से इस मुल्क में आया हूँ, दरअसल जला-भुना रहता हूँ। मेरे देश में मेरा बहुत अपमान होता तो भी यह खुशी जरूर रहती कि कभी कभी कोई अच्छा सा फ्राक मेरी गोद में आ बैठता। अक्सर मुझमें और फ्राक में हँस हँस के बातें होतीं, चहल-पहल में वक्त गुजरता मगर जिस दिन से यहाँ आया हूँ मेरी तो मिट्टी ख्वार है। यह सुनते सुनते कि हद से ज्यादा न फैलूँ, सब्र से काम लूँ। चलूँ तो संभाल कर, बैठूँ तो सिमट कर, देखूँ तो झुककर, पास रहो, मगर दूर-दूर। मैं तो आजिज़ आ गया हूँ। अच्छा हो कि किसी दिन फट-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

फटाकर इस दुनियाँ से चल दूँ।

साड़ी—क्यों ? मैं न कहती थी कि मेरा आप का साथ नहीं। आप कौन हैं यहाँ की सभ्यता पर नुक़ता-चीनी करनेवाले ? क्या इतना भी पता नहीं कि ग़ैर तो ग़ैर, भाई बहन को नहीं कह सकता कि "बहन तुम सुन्दर हो" जब जमाना बदलेगा तो बदलेगा। अभी तो फिलहाल पुरानी सभ्यता ही चल रही है और उसके अनुसार किसी सुन्दरी को सुन्दरी कहना पाप समझा जाता है और अपने आपको बुरा साबित करना है।

सूट—यही तो रोना है कि देखें तो बुरे ! कहें तो बुरे और जरा-सी आज़ादी चाहें तो बुरे। आपने मुझसे मेरा हाल पूछा ही क्यों था ?

साड़ी—ईश्वर जाने क्यों ! मगर मुझे तो कुछ हमदर्दी पैदा नहीं हुई, हमारी पुरानी संस्कृति तो यही कहती है कि दुःख में ही सुख है अगर मनुष्य की भावनायें ठीक हैं !

सूट—यह बात बिलकुल मेरी समझ में नहीं आई कि दुःख में कैसे सुख हो सकता है।

साड़ी—आप आध्यात्म से बिल्कुल कोरे मालूम होते हैं। दुख ईश्वर की ओर से दिया जाता है और जब उसकी यही इच्छा है तो दुख को खुशी से ग्रहण करना चाहिये। आपके इच्छानुसार जब दुनिया का शासन नहीं हो सकता तो बेहतर यह है कि आप वह अभिलाषायें ही पैदा करना छोड़ दें ! यहाँ अगर फ्राक और साड़ियाँ आपसे मिलना नहीं चाहतीं तो आप उनसे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मिलने की इच्छा हो न करें और भाग्य के भरोसे अपने को छोड़ दें।

सूट—यह हो चुका। अगर ज्ञान यही कहता है कि कोशिश न की जाय तो ऐसे ज्ञान को दूर से ही सलाम! कोशिश करके आपसे न मिलता तो यह मजे की बातें कहाँ से होतीं।

सूट वाले साहब बहादुर का कहना है कि किसी नुक्कड़ पर पहुँच कर साड़ी साहबा गायब हो गईं और उनका सूट फिर उनके गले का हार हो गया और यह भी कहते थे कि उस दिन से वह अपने सूट के सामने बड़े शरमिन्दः रहते हैं कि इस परदेशी की ज़िन्दगी मुफ़्त में खराब की। जब उनकी तबियत जरा खुश रहती है तो फरमाया करते हैं कि इस मुल्क में मनुष्य तो क्या अच्छा कपड़ा भी अपने नजरों में हेय हो जाता है।

इस बात को बहुत कोशिश की गई कि पता चलाया जाय कि क्या साड़ी ने साड़ीवाली से इस मुलाकात का जिक्र किया या इन तमाम बातें को बीच ही में खो दिया मगर उड़ती-उड़ती भी कोई खबर नहीं सुनी। अलबत्ता इस घटना से एक-दो महीने बाद किसी महिला का एक लेख किसी मासिक पत्रिका में प्रकाशित हुआ था। देखिये, इस लेख से शायद कुछ भेद खुल सके।

साड़ी से बातें:—

चुड़ैल! यह तेरा फड़कना मुझे कहीं का न रखेगा! क्या कहा? "कि बीबी यों ही खफा होती हो!" उलटा चोर कोतवाले डाँटे। भला मैं जो यों ही खफा होती हूँ तो यह बता कि कल जो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैं जौहरी की दुकान पर खड़ी थी तो तू क्यों जेंटिलमैन के सूट को छू रही थीं? "हवा की अठखेलियाँ"—हवा का तो वहाँ नामो-निशान भी नहीं था। अच्छा, हाँ सच बताओ! क्या कहा कि एक दफ़ा यों ही मुलाकात हो गई थी।

सूट का मुझसे और मेरा सूट से रंग खुलता था। अच्छा, कहाँ मुलाक़ात हुई थी। "बीबी वह तह होने के लिये गया था और मुझे आपने रंगने के लिये दिया था। वह एक भले आदमी की दूकान है न धरमतल्ले में। बस वहीं! हम दोनों तैयार थे, लेने कोई नहीं आया। तो हम योंही चहल कदमी के लिये जरा निकल पड़े थे। क्या कहूँ, ऐसे मजे की बातें करता था कि क्या कहिये मगर मैंने भी खूब बनाया।" अब आया मेरी समझ में, यह तेरा बना-ठना रहना, शर्म तो मरी घोलकर पी गई। क्या कहा—"क्या करूँ, रंग ही शोख़ है।" तेरा तो दिमाग फिर गया है। लेकिन बन्दी इस आजादी की हामी नहीं। क्या कहा—"तुमने उसे बहुत समझाया?" बेचारा रो दिया तो दया आ गई।" जी नहीं, ऐसी दया बस रहने दो। लोग कुछ का कुछ समझने लगते हैं। अब तुम्हारी जबान बन्द भी होगी यों कैंची की तरह चलती ही जायगी? क्या कहा कि "हँसना बोलना कैसे बन्द हो?" है न आफत! अब जो कुछ कहूँगी तो रोने लगोगी। क्या कहा कि बुरा मानने की बात नहीं। मगर बात यह है कि मनुष्य कपड़े ही से बनता है। "जी हाँ, गोया वह महात्मा लोग जो कपड़ा नहीं पहनते, मनुष्य ही नहीं!" अरी, है तो तू देशी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मगर बातें तेरी सब फिरंगिनों की सी हैं। क्या कहा कि मेरी बला फिरंगिन हो। बात यह है कि सब साड़ियों ने हलफ़ उठाया है कि हिन्दोस्तान की स्त्रियों को आज़ाद करके छोड़ेंगी, उफरे तेरे दावे ! गोया यह जो हिन्दोस्तान में तरक्की हो रही है उसके करने वाले सूत, कपास और रेशम है। क्या कहा कि हाँ बीबी सच तो है ! मर्द कम्बख्त विलायत गये तो वहाँ से ट्वीड उठा लाये मगर एक सदी से हिन्दोस्तान का रूई सफ़र करके मलमल बनकर आ रही है। आखिर कुछ तो इस सफर का असर होना था। मुझमें भी विलायती तागा है मगर उसकी बदौलत नहीं, बल्कि जमाने का तक़ाज़ा है कि हम आजादी चाहें। देशी खेतों में अमेरिकन कपास का बीज। अँग्रेजी नहरों का पानी, जापानी कारखानों की माँग, छोड़ो भी अब वह अपनी पुरानी तरंग—अरे वाह, तू तो बड़ी विद्वान निकली। क्या कहा कि "अब मुस्कुरा दूँ, क्यों ?" क्या तुझे मुस्कुराना भी आता है। अरे क्यों लिपटी जा रही है। चलूँ ! कहाँ ? बाहर ? दीवानी हो, ख्वाहम-ख्वाह चल निकलूँ ! क्या कहा— 'और कई साड़ियाँ मिल जायँगी और जो उनके साथ मर्द हुये। अरे रे रे, अगर उनके साथ मर्द भी हुये तो अच्छी बात है, कुछ खा न जायँगे। ना बाबा, तू तो बड़ी दिलेर है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मार्च में बुलबुल हूँ मैं—जुलाई में परवाना हूँ !

"हट तेरे महादेवजी जैसे हौव्वे की शकल के। रात को देख लो तो बुख़ार चढ़ आये—" मैंने पुश्कर की तरफ घृणा की दृष्टि से देखते हुए कहा—

"और तेरे—तेरे वह मस्ताना शाहजी और मुस्टण्डे पीर जो हर जुमेरात को तुझे आशीर्वाद देने आते हैं जैसे डाकू चला आता है। मेरी तो उन्हें देखकर ही घिग्घी बँध जाती है।" पुष्कर ने उँगलियाँ नचाकर कहा—

"तू तो काफ़िर है पुष्कर—" मैंने मौलवियाना अन्दाज़ से कहा—"तू जहन्नुम में जायगा। फरिश्ते तेरा बदन लोहे की सलाख़ों से दागेंगे। और आग के कोड़े मारेंगे। ख़ून और पीब खाने को मिलेगा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"है, गन्दी कहीं की—कैसी जी मचलाने की बातें करती है। मैं वह तेरे फरिश्ते के मुँह पर उलटा मारूँगा कि......। मैं काफिर हूँ तो तू काफ़िरनी है। तूने उस दिन बाबू जी से कहा था कि मुझसे शादी करेगी। तेरे भी जहन्नुम में कुछ कम जूतियाँ न पड़ेंगी।

"हट, मैं तो मुसलमान हूँ। और तू हिन्दू है। जनाब आली सारे मुसलमान तो जन्नत में चले जायँगे। हम भी मजे से जन्नत में जाऊँगी। तू ही रह जायगा। देख लीजो!"

"बहुत रह गया!" मैं तुझसे भी अच्छी जगह जाऊँगा। तू मुसलमनटी है तो नरक में पड़ी जला करेगी।"

"सुअर कहीं का—तू मुझे मुसलिमनटी कहता है? तू ही है भंगी, काफिर उल्लू!"

"तो तू भंगिन और काफिरनी है।"

मैंने उसको ज़ोर से एक तमाचा मारा। वह क्यों चूकती, दो धमाके रख दिये और हाथ अलग मरोड़ दिया। मैंने भी उसकी कलाई में नाखून ऐसे गड़ाये कि चरबी निकल आई। चाची जूती पैज़ार की आवाज सुनकर दौड़ी आई और बीच बचाव कर दिया।

"पुष्कर के बच्चे! आने दे बाबू जी को कैसी गत बनवाती हूँ—" चाची ने पुष्कर को घूँसा दिखाकर कहा, जो दीवार का घोड़ा बनाये उसे मुँह चिढ़ा रहा था।

"चाची, अब इस सुअर से मैं शादी नहीं करूँगी—" मैंने रोकर कहा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"और मैं तुझ कलूटी से कब करूँगा। माँ, यह मुझे खून पीव खिलाती है, ओक़...ओक़...पुश्कर ने उबकाई की नक़ल करते हुए कहा"—

"हे राम म्लेच्छ कहीं का—चुप।"

सची माँ, यह कहती है। सब हिन्दू नरक में जायँगे और यह बड़ा आई वाँ से उन्नत में जायगी।"

"नहीं, चाची नहीं जायगी, और भैय्या और बाबू जी भी नहीं जायँगे। पर यह उल्लू तो जरूर जायगा—" मैंने सिसकियाँ लेते हुए कहा—

"मैं गया तो तेरी भीं टाँग पकड़ कर घसीट ले जाऊँगा।"

"बहुत ले गया—वह जोर से काटूँगी कि मर ही तो जायगा।" चाची हँसते हँसते लाल हो गईं। "अरे यह नरक में भी जूता चलेगा। मुन्नी, जब तू पुष्कर को मार डालेगी तो फिर यह नरक में कहाँ जायगा ?"

"यह तब भी नरक ही में जायगा। देख लेना चाची, यह बड़ा कमीना है।"

"क्या हो रहा है?" बाबूजी ने अपना छाता बन्द करते हुए कहा—

"हिन्दू-मुसलिम-जंग।" चाची ने हँसकर कहा—"यह पुष्कर मुन्नी को मार रहा था।"

डरपोक पुष्कर भाग भी गया। चाची मुझे प्यार करती ले गई

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और मज़ेदार दालमोट खिलाई। चाची बड़ी अच्छी है यह पुश्कर ही काफ़िर है।

दीवाली आई। पुश्कर का घर दीयों से जगमग-जगमग करने लगा। मैंने उससे फौरन मेलकर लिया और दिन-भर चिराग़ों के लिये बत्तियाँ बटीं और खोवे और चीनी के खिलौने खाती रही। चाची बहुत चिल्लाईं। "मुन्नी की बच्ची, सारी रूई मसल-मसलकर गुठलियाँ डाल रही है।" मगर मैं भला कब मानती थी। शाम को पुश्कर सज कर निकला। सफ़ेद झाग-सी धोती, सुर्ख़ मलीना का कुरता, खूब माँग पट्टी किये, लाल लाल टीका लगाये। चाची भी बनारसी साड़ी पहने झाँझन झनकारती दीवले सम्भालती फिर रही थीं। पुश्कर घर की हर चीज का मालिक बना हुआ था। आज वह कट्टर हिन्दू था। और मुझसे छूत कर रहा था। वही नदीदः पुश्कर, जो कितनी दफा मेरे जूठे बेर खा चुका था। आज मुझे कचौरी दूर से पकड़ा रहा था, मेरा दिल कुढ़ा जा रहा था।

"पुश्कर, हमारे भी चन्दन लगा दो" मैंने उसे पुराने अहसानात याद दिला कर कहा—

"नहीं," उसने घमण्ड से सिर हिलाकर कहा—"तुम हिन्दू थोड़े ही हो"।

"नहीं, पुश्कर अब तो मैं हिन्दू हूँ। अम्माँ से न कहना, अच्छा!

उसे शायद रहम आ गया और उसने बड़ी होशियारी से चन्दन लगा दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ईद पर मैंने भी सारी कसर निकाल ली, पुश्कर को काफिर कहकर उससे फौरन लड़ाई कर ली। मगर जब मेंहदी से मेरे हाथ लाल हो गये तो बड़ी बेचैनी के साथ उसके आने का इन्तजार करने लगा। वह आया तो मैं लापरवाही से अपने हाथ गोद में रखकर बैठ गई।

'अहा; मुन्नी के हाथ बड़े लालकत्तर हो गये—देखें मुन्नी !"

मैंने उसके हाथ झटक कर कहा—हटो भई, हमारी तो ईद है। कोई तुम्हारी थोड़े ही है। जनाब आप कोई रोजा थोड़े रखते हैं। मुसलमान तो रोज़े रखते हैं तब हो उनकी ईद आती है।

"तू कब रोजे रखती है।"

"वाह, मैं एक दाढ़ का रखती हूँ।"

"ऊँह, वड़ी रखने वाली आई। दिन भर तो बकर बकर खाती है। ऐसे एक दाढ़का मैं भी रख लूँ।"

"वाह तुम तो हिन्दू हो"। मैंने आखिरी तुरप लगाते हुए कहा—

वह खिसियाना हो गया। "तो इससे क्या होता है।"

"हम कल नए कपड़े पहनूँगी।" मैंने इतरा कर कहा—

"मैं भी अपना कोट पहनूँगा।

"वाह, तुम तो हिन्दू हो। तुम क्यों पहनोगे। हम तुम्हें अपनी सेवैय्याँ भी नहीं खिलाएँगे।"

"और हमारी दीवाली पर यह ढेर सी खीलें ठूँस आई।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हमसे चन्दन लगवा लिया। बाबूजी से खिलौने भी ठगे और अब ऐसी बातें करती है। बेईमान कहीं की।"

मैंने फौरन पुश्कर से लड़कर उसे भाग जाने पर मजबूर किया। लेकिन कपड़े बदलते ही मुझे उसपर रोब गाँठने जाना पड़ा।

मैं गोटे पट्ठे के कपड़े पहनकर गुब्बारा बनी हुई जब पुश्कर के पास पहुँची तो उसका सारा गुस्सा रफूचक्कर हो गया। और उलटी मेरी खुशामदें करने लगा। मगर मैंने उसे बार-बार समझाया कि वह हिन्दू है और उसे हमारी ईद पर खुश होने का कोई हक़ नहीं है।

वह मायूस होकर कहने लगा—"अच्छा हमभी मुसलमान हुए जाते हैं—कहना मत किसी से।"

मगर बेईमान कहीं का—होली पर फिर काफ़िर हो गया। उसकी बन आई और मेरे पीछे लगे रहने और खुशामदें करते रहने के बजाय उसने मुझसे रंग खेलने से साफ इनकार कर दिया।

"तू मुसलिमनटी है—" उसने कहा—

अच्छा, पुश्कर ईद पर आना, फिर देखना, कैसा कैसा पीटूँगी कि याद करेगा।" मैंने सिर हिलाकर कहा—

"तो फिर तू हिन्दू हो जा न !" पुश्कर के बाबूजी ने मुस्कराते हुए कहा—

"अच्छा, तो मुझे अबरख मिला हुआ गुलाल दो।"

तू तो उस दिन कहती थी कि बदन के जिस-जिस हिस्से पर रंग पड़ता है वह नरक में जाता है ! अब रंग क्यों माँगती है।

७

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"अब मैं जो हिन्दू हो गई हूँ"—मैंने क़ायल होकर कहा—

"हैं, बेईमान, हर दफा हिन्दू होती है और फिर मुसलमान हो जाती है। पहले वादा कर कि अब कभी मुसलमान नहीं होगी।

"अच्छा"

"और मुझसे शादी करेगी—क्यों है न?

मैंने आखिरी शर्त्त मान ली। मगर ईद तो ईद, मैं मुहर्रम पर ही मुसलमान हो गई और पुश्कर को काफ़िर कहा!

यह पंडित भो क्या भोली जात है और खासकर काश्मीरी पंडित, इधर मैं पुश्कर को मारती, उधर वह फौरन मेल कर लेता। डरपोक इतना कि बकरा कटता देखकर रो दिया।

"अरे, तेरे अब्बा, इतने बकरे क्यों मार डालते हैं? उसने अपनी बड़ी बड़ी आँखें हैरत से फाड़कर कहा—

"अरे बेवकूफ, यह तो सबाब है। मैंने आलिमाना लहज़े में कहा और उसके रोने की हँसी उड़ाई।

"सबाब"! तो बकरा काटना सबाब है?

"हाँ; और क्या। जब हम जन्नत में जायँगे तो उन बकरों पर सवार होकर जायँगे पुश्कर, हम तो सटसट करके चले जायेंगे और तुम रह जाओगे।

"मैं अपनी साइकिल पर चला जाऊँगा।

मैं जल गई। वाह, पुले सरात (वैतरणी का पुल) बाल से भी पतला और तलवार से भी ज्यादा तेज़ है। तू धड़ाम से नरक में गिर पड़ेगा। और मैं इन बकरों पर टिक टिक करते चली जाऊँगी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"मैं तेरे बकरे पर बैठ कर जाऊँगा।"

"वाह, हट, मैं तुझे ढकेल दूँगी।

"मैं खुद तुझे गिरा दूँगा।"

"कैसे गिरायेगा तू" मैंने उसे थप्पड़ मारते हुए कहा—

पलभर में वह मुझे चित गिराकर दो चपतें लगा चलता बना। चूड़ियाँ टूट जाने से मेरा कलेजा फट गया। और इतना रोई कि बाबूजी उसी वक्त बाज़ार से चूड़ियाँ पहनवा कर लाये।

न मालूम कितनी ईदें और होलियाँ गुजर गईं। ज़माने के साथ ख्यालात भी बदल गये। हम दोनों तो गोया मज़हब की फ़िलासफ़ी ही समझ बैठे थे। होली पर पुश्कर आता और मुझे रंग में शराबोर कर देता और ढेरों गुलाल मल देता। जन्माष्टमी पर उसने मुझे कृष्ण की एक सुन्दर-सी मरमरी मूर्ति दी। जिसके पैरों के पास एक छोटे से फ्रेम में पुश्कर की तसवीर थी। तसवीर और मूर्त्ति दोनों मेरी मेज पर रखे रहते और मेरी कल्पना के केन्द्र बन जाते।

पुश्कर बनारस चला गया और मैं अलीगढ़। हमारे स्कूलों की छुट्टियाँ भी भिन्न-भिन्न दिनों में होतीं और इसलिये हम लोग आपस में ईद और होली पर भी न मिल सकते। ईश्वर दिसम्बर का भला करे सबके लिये बराबर की खुशी ले आता है। मैं बरामदे में लेटी कुछ पढ़ रही थी कि "मुसलमन्टी" की आवाज ने मुझे "पुश्कर" के आने की ख़बर दी। मैंने "काफिर" कहकर उसका स्वागत किया। उसने मेरे मुँह पर गुलाल मल दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"अरे, यह दिसम्बर पर होली—" मैंने उसे ढकेलते हुए कहा—

"हाँ, यह गुलाल मैंने तेरे लिये होली पर बचाकर रख लिया था। क्या तू मुझे सेवय्याँ नहीं खिलायेगी।"

"नहीं; तू तो काफ़िर है।"

"और तू काफ़िरनी; तुझे अपना होलीवाला वचन याद है।"

"कौन-सा" ? मैंने जानबूझ कर पूछा—

"अब इतराई ! तूने वादा नहीं किया था कि मुझसे शादी करेगी।"

"हट, बदतमीज़ !"

"क्यों बनती है।"

हम दोनों हँसने लगे।

"सुना है, मुसोलिनी तुम लोगों पर बड़े जुल्म ढाह रहा है।"

पुश्कर मेरी साँवली (काली सही) रंगत पर हमेशा छींटा कसा करता है।

"विलायती चूहे ! तू अपनी तो खबर ले। सुना है, फी चूहा एक आना चुंगी से इनाम मिलता है।" मैंने उसकी गोरी रंगत पर हमला किया।

हिन्दू-मुस्लिम दंगे पर मैंने उससे कहा—"भाग यहाँ से भई, तू हिन्दू है। कहीं छूरी उरी न मार दे !"

"तू ही कसौटी है—मैं तो बेचारा डरपोक–तू ही सैकड़ों बकरे हज़म कर गई होगी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"मगर पुश्कर, तुम तो बकरे नहीं बैल हो।"

उसने मेरे हाथ में इतने जोर से काटा कि मैं तड़प उठी।

"अगर तू इतनी कलूटी उलटा तवा न होती, तो मैं जरूर तुझसे शादी कर लेता।"

"खैर पुश्कर ! मैं उलटा तवा तो नहीं हूँ।

"तो आपका मतलब यह है कि आपसे शादी कर लूँ—जी !" उसने आँखें चमका कर कहा—

"चुप काफ़िर"

"जानती हो, उर्दू शायरों ने काफ़िर किसे कहा है ?

"वह काफिर और होता है। तू तो गधा हिन्दू है।"

"क्या हिन्दू और मुसलमान गधे अलहदा अलहदा होते हैं। और यहूदी गधे कैसे होते हैं ?"

हम लोग भिन्न-भिन्न मजहबी गधों पर बहस करके हँसने लगे।

जमाना गुजरता गया। पुश्कर डिप्टी कलक्टर होकर हमारे करीब के जिले में मुकर्रर हो गया। उसकी मोटर एतवार के दिन घिस डाली जाती थी। उसने कई बार मुझे अपना होली वाला वचन याद दिलाया लेकिन मैंने उसे बेतुकी बात कहकर जबान से निकालने को भी मना किया।

"आखिर क्या तू मुझे यों ही डराती रहेगी। मैं आज माँ से जिक्र करूँगा। चाहे फिर ग़दर ही क्यों न हो जाय। डरपोक कहीं की !"

"पुश्कर, बड़े जूते पड़ेंगे ! याद रखो, अब्बा पेट फाड़ डालेंगे।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"अजी इन बातों से मैं नहीं डरता। लेकिन यह तो सोचो कि आखिर कब तक यही सोचते रहें कि आसमान से हमारी मदद को कोई आये।"

"पुश्कर, यह तो सोचो, हम और तुम कितनी अनुचित बात कर रहे हैं। हमारे दरम्यान एक खाड़ी खड़ी है, मज़हब!"

"अजी गोली मारो इस मज़हब को। मज़हब हमारे फ़ायदे के लिये है न कि हम उसकी कुरबानी के लिये।"

"तुम अब्बाजान और चचा की आपस की मुहब्बत को देखो, उनकी जो बात शहर में है उसपर ग़ौर करो। हमारी शादी से उनकी कैसी ज़िल्लत होगी। अखबार, जिन्हें कोई गत का विषय नहीं मिलता। वह हमारी तसवीरें, हमारी इश्कबाजी और वर्तमान शिक्षा-प्रणाली का कैसा मजाक उड़ायेंगे कि मुँह दिखाना मुश्किल हो जायगा। ग़ैर मजहब में शादी करना जुर्म ही नहीं बल्कि एक आफ़त है। हमारी क़ौम के लड़कों को तो इजाजत है कि वह हिन्दू, ईसाई जिससे चाहें शादी कर लें लेकिन लड़कियों को नहीं। और आज तक गर्व से कहा जाता है कि मुसलमान लड़की कभी ईसाई से शादी नहीं करती। न मालूम कहाँ तक यह गर्व सही है।"

"लेकिन मैं मुसलमान होने को तैयार हूँ।"

"इससे क्या होता है। दूसरे मुझे यह तुम्हारी शर्त मंजूर नहीं है।"

"चूँकि मेरे लिये तुम्हारे मुसलमान हो जाने से कोई फर्क न

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होगा। तुम अब भी इतने ही पाजी रहोगे। पसन्द से और मजहब से दूर का भी लगाव नहीं।"

"तो फिर तू हिन्दू हो जा।"

जरा सोच समझकर बात कर। अभी जो मैं कह दूँ कि मुझे मुराद बना रहा है तो मुहल्ले के सारे कसाई तेरी बेटियाँ उड़ा डालेंगे। दूसरे अगर हो जाऊँ तो फिर रबड़ की नाक भी सलामत न रहेगी।"

"हम गुलाम हैं पुश्कर, हमारी कोई चीज कहलाई जाने की मुस्तहक़ नहीं। हम सोसाइटी का मिल्कियत हैं। वह जो कुछ चाहे हमारे साथ कर सकता है हम अगर चाहें तो भी कुछ कर नहीं सकते।"

"यह सब वाहियात है। मैं कुछ नहीं जानता। तुम्हारे भाई जो एक बीवी की मौजूदगी में मेम ले आये, वह ईसाई है, बराबर मैंने उसे गिरजा जाते देखा है और तुम्हारे भाई साहब को भी!"

"पुश्कर, वह मेम है और तू पण्डित! और मैं बक़ौल तेरी मुसलमन्टी, उसका लगा ले हिसाब!"

पुश्कर बेचैनी से टहलने लगा। मैं इस सोसाइटी के टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा। सुनती हो, हम आज ही सिविल मैरिज कर लेंगे।

"ख्वाहमख्वाह," बकने से क्या हासिल! तुम जानते हो, अब्बा को किस क़दर सदमा होगा और तुम्हारी बिरादरी तुम्हारा हुक्का-पानी बन्द कर देगी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"फिर क्या करें सच बता, कहीं तू उस पाजी हमीद से तो शादी नहीं कर रही है। और मुझे चकमे दे रही है। याद रख, इस क़दर पिटवाऊँगा—खाँ साहब को, कि भूल जायँगे और इलाका अलग कोरट करा लूँगा। देख, अगर हम डरते रहे तो बस...हो चुकी जिन्दगी!"

"तू तो सचमुच पागल ही है। सोचने तो दे। शायद खुदा कोई राह बता दे।"

"अब बता चुका खुदा रास्ता! मैं जो बता रहा हूँ। कोतवाली के करीब से होते हुए दाहने हाथ को निकल चलो। वहाँ से बस बड़ी सीधी सड़क मिल जाती है।"

"और फिर वहाँ से वापिस आकर अब्बा का जूता।"

"वापिस क्यों! वहाँ से सीधे दौरे पर चलेंगे।"

"तो यह मशहूर हो जायगा कि मैं भाग गई।"

"नहीं, बल्कि मैं तेरे साथ भाग गया। उठ जल्दी, हाँ! तुझे कुछ मुहर उहर क्या होता है, वह चाहिये, मैं रजिस्टरी करा दूँगा।"

"मुहर मैं खुद तुझे दूँगी। मेरी तनख्वाह तुझसे जरा सी ही तो कम है।"

"अच्छा उठ तू ही मुहर दे।"

"मगर जब जी चाहेगा तलाक़ दे दूँगी।"

"यह झोल झाल, तू तो हर वक्त लड़ती रहती है। घड़ी में सात तलाकें देगी। चल जल्दी से साड़ी बदल ले।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"और बड़ी नाक।"

"ठीक है, बड़ी लम्बी-सी दिला देंगे। यह तो वैसे भी बिल्कुल चपटी है।"

"तो मैं नहीं चलती।" मैंने दरवाजा पकड़ कर कहा—

"अपना बस नहीं चलेगा! उसने घसीटते हुए कहा"—

"थोड़ी देर बाद हम लोग कोतवाली की सड़क पर सीधे चले जा रहे थे।

"अब भी लौट चलो।" मैंने पुश्कर के कान में कहा—

"सचमुच!" उसने गम्भीर होकर पूछा—

मैंने सिर हिला दिया—उसने मेरी गरदन पकड़ कर झकझोर डाली।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हम भी उम्मीदवार थे

"उम्मेदवारी शब्द से हमारा तात्पर्य उस उम्मीदवारी से नहीं है जो ग़रीब घरों में हर साल और राजे, महाराजे, रईसों और सेठों के यहाँ सारी उम्र में इत्तफ़ाक से एक आध बार हो जाया करती है। बल्कि वह उम्मेदवारी है जो इन्ट्रेन्स, बी० ए०, एम० ए० पास करने के बाद कालेज से निकल कर साहबज़ादे साहब दफ्तरों में किया करते हैं और बरसों करते रहते हैं मगर सर पटकने पर भी सफल नहीं होते।

शिक्षा के दिनों में विद्यार्थियों के खर्च का बोझ उनके पिता या अभिभावक उठाते हैं और उम्मेदवारों का खर्च अल्लाह मियाँ के भरौसे चलता है। काम करने पर भी उन्हें काम करने का पारिश्रमिक नहीं मिलता और न घर से हर महीने मनीआर्डर ही आता है। क्योंकि उम्मेदवारी कोई शिक्षा तो है नहीं जिसका कोई अन्त हो, या कोई कोर्स पूरा करने की मियाद हो। विद्यार्थी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जीवन में माँ-बाप इस आशा में कि लड़का पढ़-लिखकर हज़ार पाँच-सौ का नौकर हो जायेगा, आँखें बन्द करके रुपया खर्च करते हैं। यह तो एक तरह की कैद या बेगार है। जहाँ माँ-बाप का दिया हुआ टुकड़ा भी खाने को नहीं मिलता। बल्कि उसे हमेशा 'रामआसरे' रहना पड़ता है या अफ़सर साहब की खास मेहरबानी पर ! जो किसी को जल्दी मिलती नहीं। तारीफ़ यह कि इस क़ैद से छुटकारा भी सिर्फ किस्मत के जोर से ही मिलता है। हम भी एक बार ऐसी ही कैद में पड़ चुके हैं। मुश्किलों से छुटकारा मिला है।

घटना इस प्रकार है कि हम जो स्कूल से निकले तो रोटियों के देवता ने कान में फूँक दिया कि कमाओ और खाओ—याने अपने पैरों पर खड़े हो जाओ और चूँकि खाने और कमाने के माने हिन्दोस्तान में 'नौकरी' है। इसलिये हमें फौरन नौकरी की फिक्र पड़ गयी। मगर जैसे लीडरी बिना जेल गये नहीं मिलती, उसी तरह नौकरी भी बिना उम्मेदवारी की मञ्जिल पार किये नहीं मिल सकती। अगर मिल भी जाये तो समझ लो कि वह नौकरी नहीं बल्कि 'खुदा की देन' है। खैर कहने का मतलब यह कि हम बहुत कोशिशों के बाद एक दफ्तर में उम्मेदवार हो गये, जिसमें एक ज़बान के सुर्ख और रंग के सफ़ेद साहब सैकड़ों ग़रीब मजदूर, हमारे जैसे गधों के खुदा ने हमें सबसे पहले परीक्षा के लिये कुछ काग़ज़ात पढ़कर सुनाने का हुक्म दिया। चुनांचे हम काग़ज़ात का एक बहुत बड़ा बोझा लेकर साहब के सामने पहुँचे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वे निहायत इतमीनान और आराम से कुरसी पर लेटे हुए थे। साहब ने अफसराना तौर पर पूछा—

"क्या नाम है तुम्हारा ?"

'मुहम्मद इसहाक़'

"शेख़ है तुम ?"

"नहीं जनाब, बी० ए० हूँ।"

"उर्दू जानते हो ?"

"खूब अच्छी तरह ! यह मेरी मादरी ज़बान है।"

"मादरी ज़बान के माने ?"

"मां की ज़बान"

"हूँ, मां की ज़बान को ! और तुम्हारे बाप की ज़बान अँगरेजी है ?"

"नहीं, मां और बाप दोनों की ज़बान उर्दू है।"

"तुम्हारी ज़बान अंगरेजी है ?"

"नहीं, मेरी भी उर्दू है !"

"अंगरेजी नहीं जानता तुम ?"

"जानता हूँ। मैंने अंगरेजी पढ़ी है। बी० ए० हूँ।"

"उर्दू नहीं पढ़ी तुमने ?"

"उर्दू भी पढ़ी है "

"डीवट जानता है, तुम किसको बोलता है ?"

"जी हां जानता हूँ !"

"किसको बोलता है ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"चिराग़ रखने की लकड़ी को दीवट कहते हैं।"

"ओह नो! ग़लत!! तुम नहीं जानता! देखो, तुम्हारे जैसे आदमी को डीवट कहते हैं।"

अब हमें 'ठीक है,' 'दुरस्त है,' 'जी हां हुजूर' कहने के सिवा कोई चारा न था। वह तो ग़नीमत यह हुआ कि साहब ने पहली ही मुलाकात में दीवट बनाया, और कुछ बनाया होता तो हम उनका क्या कर लेते। हमने सिर झुका कर आहिस्ता से कहा—बिल्कुल सही है, हुज़ूर हम दीवट न होते तो आपके दफ़्तर में उम्मेदवार ही क्यों होते!

इसके बाद हमने साहब के इशारे से मेज़ के सामने खड़े होकर काग़ज़ात पढ़ने शुरू किये। पहला दिन था और इम्तहान का मौक़ा। हमने तय कर लिया कि मतलब पूरा हो या न हो, तेजी से काग़ज़ों को पढ़ना चाहिये। कोई शब्द समझ में न आये तो अपनी तरफ़ से गढ़कर पढ़ देना चाहिये। हम चार-पाँच कागज़ बहुत तेजी से पढ़ गये। बग़ैर रुके और हिचकिचाये पढ़ते ही चले गये। कहीं ठहरने और साँस लेने का नाम भी नहीं लिया। साहब क़लम होठों पर रखे ताज्जुब से हमारा मुँह देख रहे थे और हम थे कि पन्ने पर पन्ने उलटते चले जा रहे थे। एक बार साहब जरा कुरसी पर सँभल कर बैठ गये और घबरा कर हुक्म दिया पीछे हटो, मुंशी! पीछे हटो!!

कागज में पीछे हटने का मतलब हम देर के बाद समझे और दो-तीन लाइन आगे छोड़कर हमने फिर उसे पढ़ना शुरू किया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कोई बहुत जरूरी कागज था। साहब ने सुनने के बाद कहा—मेज पर रख दो ! हम गोर मारेगा ! (हम गौर करेंगे)

दो तीन दिन में हमें बहुत से नये संशोधन अपनी उर्दू में समझ में आ गये। और साहब की गुलाबी उर्दू भी बखूबी समझने लगे। दफ्तर के कागजात का सिलसिला वगैरह भी हमने समझ लिया। और हमने अपने दिल में विश्वास कर लिया कि हमें बहुत जल्द कोई अच्छी जगह मिल जायगी।

सौभाग्य से हमारे दफ्तर में एक जगह ख़ाली होने से एक हफ्ते पहले ही हमने एक दरख्वास्त पेश कर दी। नतीजा यह हुआ कि हमारी दरख्वास्त ग़ौरतलब ही रही। साहब ने न मालूम इस पर कब तक ग़ौर करने का इरादा किया था। और ख़ाली जगह पर एक हसीन नवयुवक की जिसकी कि मसें नहीं भीगी थीं नियुक्ति कर ली। और यह जाहिर कर दिया कि नौकरी के लिये सिर्फ़ उम्मेदवारी और विद्वत्ता ही की जरूरत नहीं, बल्कि सौन्दर्य की भी आवश्यकता पड़ती है। और यह डिप्लोमा, अफसोस है कि किसी यूनिवर्सिटी से हासिल नहीं किया जा सकता। इसलिये नौकरी भी नहीं मिल सकती।

यहां से निराश होकर हम एक दैनिक समाचार पत्र के दफ्तर में चले गये। उसे सहकारी सम्पादक की आवश्यकता थी। जो-जो विशेषतायें उस आदमी में होनी चाहिये थीं, वह हममें मौजूद थी। इसलिये यह आशा रखना कि हमें यह जगह मिल जायगी, कोई अनुचित बात न थी। इस पत्र के सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जी बहुत ही भले तथा मुहब्बतदार आदमी थे। उन्होंने बिना परीक्षा लिये ही हमें सहकारी सम्पादक की हैसियत से काम करने की आज्ञा दे दी और हम काम भी करने लगे। हम बड़ी मेहनत और दिलचस्पी से अपना काम करते थे बल्कि हमारे परिश्रम की तारीफ भी की गई। लेकिन उम्मेदवारी खत्म न हुई और इसके लिये विज्ञापन भी बराबर निकलता रहा। हमारे साथ साथ पन्द्रह आदमी और उस जगह के उम्मीदवार थे। हर आदमी को यकीन था कि मैं ही इस जगह के योग्य हूँ और मुझे ही अधिकार है कि मैं सहकारी सम्पादक के पद पर नियुक्त किया जाऊँ। कई महीने बड़ी शान्ति के साथ बीत गए और हम सम्पादकी के काम में इतने तेज हो गये, कि अगर हमें उस रकम में से आधा भी मिल जाता, जो हमारी शिक्षा में खर्च हुई थी, तो हम स्वयं उससे अच्छा अखबार निकाल सकते थे। माँ बाप ने उससे आधा भी कारोबार के लिये नहीं रखा। और रखते भी क्यों? उन्हें विश्वास था कि हमारे साहबजादे साहब कालेज की चहारदीवारी से निकलते ही या तो अबीसीनिया के राज-सिंहासन पर विराजमान होंगे या कम से कम हिन्दोस्तान ही में उन्हें किसी प्रान्त की गवर्नरी मिल जायगी। और फिर जनाब, विद्यार्थी जीवन में हमने जो जायदाद गिरवी रख दी है वह सब छूट जायगी। इस नासमझी में उन्होंने हमारे हिस्से की पूरी रक़म दिल खोल कर शिक्षा में खत्म कर दी थी। हमें भी क्या मालूम था कि हम ऊँची ऊँची डिगरियाँ लेकर 'उम्मेदवारी' में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दर बदर को खाक छानते फिरेंगे? जो न मरने देगी और न अन्य दिलचस्पियों में हिस्सा लेने देगी।

जब सम्पादकजी ने लम्बी उम्मेदवारी के बाद भी हमारी नियुक्ति के सम्बन्ध में कोई भी आज्ञा नहीं दी। तो हमने उनसे प्रार्थना की और कहा—"अब हमने काम सीख लिया है...अस्तु हम उम्मीदवारों में ही किसीको आप चुनकर नियुक्त कर लीजिये। और अगर आप सबको नौकर रखना चाहते हैं तो मुझे कोई आपत्ति नहीं।

"हमें सहकारियों की कोई फौज तो भर्ती करनी नहीं है। अखबार का दफ्तर कोई रंगरूटों का शिक्षालय तो नहीं है। हम काम का आदमी चाहते हैं और संभव है हमें अपने काम लायक़ इस दल में से एक आदमी निकल आये।

"और वह आदमी आपकी राय में कौन होगा?"

"जो परीक्षा में उत्तीर्ण हो।"

'बहुत ठीक, तो परीक्षा कब होगी?'

'जब हम मुनासिब समझेंगे!'

'मैं भी यही चाहता हूँ कि आप जब मुनासिब समझें, हमारी परीक्षा ले लें।'

बड़ी मुश्किल से राम राम करके परीक्षा का दिन आया। सब उम्मेदवार ज़मीन पर बैठ गये। बीच में प्रधान सम्पादकजी गोल घूमनेवाली कुर्सी पर इस शान के साथ बैठे मानो दूसरी खुदाई का इन्तजाम करने बैठे हों। खैर साहब उन्होंने हम लोगों को

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

अलग-अलग विषय दिये और घण्टे भर में लेख तैयार करने का हुक्म देकर चले गये। हम लोगों ने बड़ी तेजी के साथ सफेद काग़ज़ पर अपना कलम-कुल्हाड़ा चलाना आरम्भ कर दिया। बड़े बड़े संस्कृति के शब्द चुस्त और मुहावरेदार भाषा और रंग-बिरंगे भाव काग़ज़ पर सीमाबद्ध करना शुरू कर दिया। घण्टे भर के अन्दर ८ पेज का लेख तैयार हुआ। आज्ञानुसार सम्पादकजी के सामने पेश किया। आदेश हुआ कि आप लोग अपने-अपने लेख मेरे सामने छोड़ दें। मैं इन्हें देखकर परिणाम निकाल लूँगा। आप बदस्तूर दफ्तर में काम करें।

मैंने पूछा—कब तक इस परीक्षा का फल मालूम होगा?

जवाब मिला—कोई तारीख़ या दिन इसके लिये नहीं बतलाया जा सकता। आप तो देखते ही हैं कि मुझे एक मिनट की फ़ुरसत नहीं। फिर भी महीने भर के अन्दर ही अन्दर देख लूँगा।

हर उम्मीदवार को सफलता की आशा थी क्योंकि हर एक ने अपना लेख बड़े परिश्रम से लिखा था। लेकिन महीने भर के बाद जो फल निकला वह बड़ा ही नैराश्यपूर्ण था यानी कोई उम्मेदवार इस योग्य नहीं समझा गया कि सहकारी सम्पादक बनाया जा सके। यह सुनना था कि हर उम्मेदवार ने अपना सिर पीट लिया। दोस्तों ने ताने देने शुरू किये। कम्बख्त कहीं के! कालेज में चालाकियों से इम्तेहान के पर्चे उड़ा लेते थे। यहाँ चाल नहीं चली। जब योग्यता से काम लेना पड़ा तो फेल कर गये।

किसी ने कहा—भाई, पत्र की सम्पादकी बड़ी मुश्किल चीज

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है। इसके लिये बड़े दिमाग़ की जरूरत पड़ती है। तुम्हें सूझी क्या थी आखिर ! जो दुनिया के हजारों काम छोड़ कर अख़बार के दफ्तर में जा घुसे। अब तक तो किसी सरकारी दफ्तर में उम्मेदवारी करते तो कम से कम ८०) ९०) मासिक क़ी कानून-गोई या कुर्क अमीनी तो मिल ही जाती।

हम थे तो खालिस हिन्दोस्तानी मगर गैरत थोड़ी सी थी ही। इसलिये अकसर इरादा होता था कि ६ माशे रस कपूर खाकर आराम से सो जायं। लेकिन यह इरादा कभी अमल में न आता था। आख़िर कोई इन नुक्ताचीनों से पूछे कि भई, योग्यता तो बहुत है लेकिन क़िस्मत को क्या करें, जिसने कालेज से निकलते ही साथ छोड़ दिया। अक्ल की तो ख़ैर; कोई परवाह नहीं, क्योंकि दस मन योग्यता के लिये एक मन अक्ल बहुत है। बल्कि जब से हिन्दोस्तानी यूनिवर्सिटियों ने विद्या मंहगी कर दी है, दस बारह मन योग्यता से काम लेने के लिये छः सात माशा अक्ल भी काफी है। और कई हालतों में तो पढ़ा लिखा आदमी बिना अक्ल के ही काम निकाल लेता है। अलबत्ता क़िस्मत की शिकायत है कि वह साथ-साथ तो क्या बल्कि दो चार ग़ज़ हमेशा आगे ही रहती है।

ख़ैर साहब, हमने अंग्रेजी दफ्तर में उम्मेदवारी आरम्भ की। साहब जरा सख्त थे। बात-बात में बिगड़ते, नाराज होते, गरजते, चिल्लाते, उछलते-कूदते कभी कभी मार भी बैठते थे। एक उम्मे-दवार साहब तो अपना दाँत भी साहब के गुस्से को नजर कर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चुके थे। मगर उस घटना के बाद में ही 'अहिंसात्मक' हो गये। याने अब वह किसी को मारते न थे, बल्कि जुर्माना कर दिया करते। हफ्ते भर के अन्दर जुर्माना अदा न करने पर उम्मेदवारी से नाम काट दिया जाता। धीरे २ जुर्माने की सजा ने सब उम्मेदवारों को दफ्तर छोड़ देने को मजबूर किया, रह गया सिर्फ मैं ! मुझ पर साहब बहादुर की दया-दृष्टि थी। याने चार रुपये से अधिक जुर्माना नहीं करते थे।

एक दिन, शामत की मार; हमें साहब के साथ दौरे में जाने का हुक्म हुआ और उनके कैम्प का इन्तजाम भी हमीं को करना पड़ा। उम्मेदवारी करते हुए हमें दो-तीन महीने से ज्यादा नहीं हुए थे और जो आदमी छः महीने की उम्मेदवारी के बाद भी सम्पादन कला में असफल रहा हो। उससे क्या उम्मीद की जा सकती थी कि वह इस जबर्दस्त इम्तहान में पास हो ही जायेगा। मगर हमारी राय में सफलता झंझटों का दूसरा नाम है और जो आदमी झंझटों से डरता है, वह कभी अपने काम में सफल नहीं हो सकता।

खैर, हम दौरे पर रवाना हो गये। पहली ही मञ्जिल पर हमारा बड़ा जबर्दस्त स्वागत हुआ। गांव के सैकड़ों आदमी कैम्प के दरवाजे पर मौजूद थे। सबने झुक कर सलाम किया। पहले तो हमने समझा कि शायद उन्होंने ग़लती से हमीं को साहब समझ कर सलाम किया है। लेकिन बाद को चपरासी ने बतलाया कि साहब का सरिश्तेदार मामूली आदमी नहीं होता। गांववालों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

का सारा काम सरिश्तेदार ही से पड़ता है। यह सुन कर तो हम फूले न समाये। मगर साहब के जुर्माने का खयाल आते ही सारी खुशी हवा हो गई। इसके बाद साहब की मेज पर से हमने उनका रूल हटा कर खेमे में रख दिया।

उस दिन हमें साहब के सामने बहुत से कागजात पेश करने थे। उनमें कोई भी कागज़ ऐसा न था जिसे हमने पूरी तरह समझ लिया हो। साहब ने हुक्म दिया कि हम ठीक दो बजे काम शुरू करेंगे। हमने बड़ी कोशिश से सब कागजात जमा करके उनकी मेज पर रख दिये। जब ठीक दस बजे साहब ने घंटी बजाई तो बदहवास होकर खेमे की तरफ दौड़े। वह एक मिसल को देख रहे थे। हमें देखते ही पूछा—पूरन कौन है?

'हुजूर, आदमी है।'

'काश्तकारी करता है?'

जी हाँ!

कहाँ रहता है?

इसी इलाके में अपने घर रहता है।

साहब ने नीचे से ऊपर तक एक बार हमें देखा फिर कागजों पर निगाह जमा कर पूछा—तुमने कागजों को अच्छी तरह पढ़ा है?

"जी हां!".

'इस गांव में कितने आदमी आबाद हैं। तुम्हें कुछ मालूम है?'

जी हां, क्यों नहीं। कुल पांच हजार हैं। पौने चार हजार के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

करीब हिन्दू हैं और एक हजार मुसलमान हैं। बाकी भंगी चमार हैं।

कोई मन्दिर तो नहीं है गांव में ?

जनाब चार मन्दिर इस वक्त मौजूद हैं एक गिर गया है। किसी जमाने में दो मसजिदें थी, मगर एक बाकी रह गई है।

'कोई जरायम पेशा तो नहीं रहता यहां ?

'रहता क्यों नहीं साहब ! एक बहुत बड़ा डाकू यहां रहा करता था; अब मर गया हो तो मैं नहीं कह सकता !"

'यहां अधिकतर किस चीज की खेती होती है ?'

'खेती के लिये हजूर क्या पूछते हैं। गेहूँ, चना, मसूर, ईख, अलसी, सरसों, आलू, तिल, गोभी, शलजम, गाजर सभी कुछ तो होता है यहां !'

'गांव में पानी देने को कुछ कुएँ भी हैं ?'

करीब २५ कुएँ भी हैं ! पक्के और कच्चे मिलाकर।

ग़नीमत थी कि साहब हमारे जवाब सिर्फ सुन रहे थे, लिख नहीं रहे थे। मगर हमारी जबर्दस्त जानकारी का उन पर गहरा असर पड़ा और शायद उन्होंने अपने दिल में हमारी योग्यता हाज़िरजवाबी के सम्बन्ध में जरूर अच्छी राय कायम की होगी।

इतनी बातों के बाद इजलास कल के लिये मुल्तवी हो गया और हमारे पूरे दांत आप लोगों के आशीर्वाद से सुरक्षित रह गये।

अगले दिन खानसामा की ग़लती से साहब के चाय का दूध

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कुत्ता पी गया और उन्हें चाय न मिल सकी। या मिली तो बिना दूध की। फल यह हुआ कि जब वह इजलास पर आये तो उनके चेहरे से गुस्सा टपक रहा था। उनकी सूरत देखते ही हमारे तो हाथ पैर फूल गये। उन्होंने लिखते लिखते हमारी तरफ़ देख कर फरमाया कि बहुत से क़ागज़ ला रखे हैं तुमने मेज पर !

"आज की तारीख में इतने ही थे।"

"क्यों थे इतने।"

"मालूम नहीं जनाब, क्यों थे इतने ?'

बस हमारे मुँह से 'मालूम नहीं' का निकलना था कि साहब ने झुंझला कर मेज़ पर रूल तलाश करना आरम्भ किया। रूल न मिला तो पेपर वेट उठा कर उन्होंने बड़ी तेजी और ताकत के साथ हमारी तरफ फेंका। हमने निहायत फुरती और लायकी से दो फिट सिर नीचा कर के वार खाली जाने दिया। इससे वह और आग बबूला हो गये और अब उन्होंने मोटी सी मिसल उठाई। हमने देखा कि वह कोई खतरनाक हथियार नहीं है। अगर लग भी जाय तो दाँतों को कोई नुकसान नहीं पहुँचेगा। हम बदस्तूर खड़े रहे।

साहब भी यह चाहते थे कि दाव पेंच करके हम उनके वार की तौहीन न करें। उन्होंने जोर से मिसल हमारे मुँह पर मारी, मिसल की नत्थी का नुकीला सिरा हमारी बायीं आंख को घायल करता हुआ कान में लगा। हालांकि कान भी जख्मी हो गया। लेकिन कान की हमें कोई परवाह न थी। चेहरे की सजावट के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लिये नाक और कान काफी हैं। मगर आंख हमें बहुत प्यारी थी, आँख देकर पांच सौ रुपये की नौकरी भी मिले तो हम लात मार देंगे।

इसके बाद हम खीमे से बाहर निकल आये और अपने खीमे की तरफ चले, ताकि भविष्य में आंख के बचाने की फिक्र करें। अभी हम अपने खीमे तक पहुँचने भी न पाये थे कि साहब ने घण्टी बजाई। हमने उधर जरा भी ध्यान न दिया और आते ही अपना बक्स खोला। नोट निकाल कर जेब में रखे और रूल हाथ में लेकर हम इस ख्याल से बाहर निकले कि रुपया साहब के सामने डाल दें और रूल उन्हें देकर कहें कि पचास रुपये तक आप जुर्माना कर लें और रूल से जितना दाँत तोड़ना चाहें तोड़ डालें। लेकिन आंख का नुकसान हम किसी हालत में बर्दाश्त नहीं कर सकते। नौकरी मिले या न मिले। इधर से तो हम इस ठाट बाट से बरामद हुए और उधर से साहब जिन्हें हमारा इस तरह भाग आना बहुत नागवार गुजरा था और घण्टी बजाते बजाते थक गये थे, हमारी तलाश में खीमे में से बाहर निकल कर हमारी तरफ चले। मगर वह अधिक दूर न आये थे कि उन्होंने देखा कि हम रूल हाथ में लिये तेवरों पर बल डाले चले आ रहे हैं। वह घबड़ा कर भागे और खीमे में घुस गये। हमने देखा कि साहब शायद यह समझा है कि—हम उन्हें मारने जा रहे हैं। हम और तेजी से लपक कर उनके खीमे में घुसे। साहब बहादुर कुर्सी के पीछे बैठे कांप रहे थे। हमें देख

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कर ही सहमी हुई आवाज में उन्होंने कहा,—मुंशी देखो हम अकेले हैं।

"और हमारे पास कौन सी फ़ौज है ?

'देखो रूल मत मारना, चोट लग जायगी।'

'मिसल मारूं कि आंख फूट जाये।'

'हम माफी चाहते हैं।'

'हम नौकरी चाहते हैं।'

'अच्छा, हमने नौकरी दी।'

"अच्छा नौकरी दो जल्दी से।"

"अच्छा, रूल फेंक दो।"

हमने रूल फेंक दिया और साहब इत्मीनान के साथ बाहर निकल आये। मेज पर पहुँचकर उन्होंने १००) माहवार की एक जगह पर हमारी नियुक्ति लिख कर देते हुए फरमाया—

"अभी आफिस चले जाओ और पेशकार से बोलो, तुम्हें नौकरी मिलेगी।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तहसीलदार साहब

बात ज़रा पुरानी है। हिन्दुस्तान में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की हुक़ूमत कायम हो चुकी थी। लेकिन अभी बचपन का ज़माना था। बेचारी कम्पनी को खेलने-खाने से ही फ़ुर्सत कहाँ थी परन्तु शासन की बागडोर हाथों में ली थी। अपने में इतनी शक्ति न थी कि हुकूमत जैसा मुश्किल और जिम्मेदारी का काम अपने सर सँभालती, इसलिये जरूरी था कि कुछ काम अपने सहचरों में बाँट दिये जायँ!

नवाबी के मक़बरे पर लखनऊ में भी कम्पनी की हुकूमत कायम हो चुकी थी। एक यूरोपियन मजिस्ट्रेट वहाँ तैनात थे। कम्पनी की ओर से वहाँ के शासन की बागडोर उन्हीं के गोरे हाथों में दे दी गई थी। उन्होंने अपनी ओर से उसी इलाके के एक नब्बाब के साहबजादे साहब को तहसीलदार मुक़र्रर कर दिया। बेचारे साहबजादे साहब को तहसीलदारी से क्या सरोकार। ज़िन्दगी के बाइस साल कनकव्वे लड़ाने, बटेर-बाजी और शेरोशायरी में बिताये थे। अब जो तहसीलदारी मिली तो अपने पिता से बोले—किबला, यह तहसीलदारी क्या बला है?

नब्बाब—बेटा, तहसीलदारी बहुत बड़ा रुतबा है। सारी तहसील के तुम मालिके-मुख्तार हो। चाहे जिसको जमीन में गड़वा दो या तोरों का निशाना बनवा दो। यह रुतबा किसी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

को यों ही थोड़े ही मिलता है। मेरी बुज़ुर्गी का ख़याल करके साहब ने तुम्हें यह रुतबा दिया है। वरना इनकी अमलदारी में तहसीलदारी तो क्या खाकसारी नसीब होनी भी मुश्किल थी!

इतना कहकर नवाब साहब ने अफ़ीम की पीनक में सिर झुका दिया और साहबज़ादे साहब चुपके से खिसक आये। बाहर बैठक में आकर सोचा अगर वाक़ई बात सही है और जैसा कि अब्बाजान फ़रमाते हैं, मैं सारी तहसील का 'वह' हो गया हूँ तो बस, पौ बारह हैं! खूब कनकौवे लड़ेंगे और बटेरों की बाजियाँ होंगी। अबकी क़मरूखाँ के बटेर के छक्के न छुड़ा दिये तो नाम नहीं!

साहबज़ादे साहब इसी धुन में डूबे हुए थे कि मैजिस्ट्रेट साहब का चपरासी आया और सलाम करके खड़ा हो गया। पहले साहबज़ादे ज़रा सकपकाये, मगर फौरन खयाल आया कि "मैं तो तहसीलदार हूँ।" आपने ज़रा तिरछे होकर पूछा—"क्यों, क्या बात है?"

"हुज़ूर, साहब ने आपको याद किया है?"

अब तो साहबज़ादे साहब ज़रा सीधे हुए। बोले—"अच्छा साहब से बोलो, हम अभी हाज़िर होते हैं।"

आपने कपड़े बदले। बन-ठन कर बाहर निकले और पालकी में बैठकर साहब के बँगले पर पहुँचे! पालकी से उतरते वक्त शीशे में एक बार टोपी वगैरह ठीक करके साहब के सामने गये। फ़र्शी सलाल किया। साहब बोले—वेल, टहसीलडार! हम कुछ बैरे के बनवाना माँगटा है, आप उनके नक्शे तैयार करके लाइये!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आपने कहा—बहुत अच्छा हुजूर ! फौरन हाजिर करूँगा।

कहने को तो कह आये, लेकिन आपको नक्शे और पैमाने (माप) से क्या वास्ता ! बहुत सोच-विचार कर एक चित्रकार बुलवाया और उस से एक इमारत की निहायत उम्दा रंगीन तसवीर बनवाई।

संयोग से एक दिन मैजिस्ट्रेट खुद तहसीलदार के यहाँ तशरीफ़ लाये और बातों-ही-बातों में नक्शे का जिक्र आया। तहसीलदार साहब ने फौरन तसवीर निकाली और पेश कर दी। रंगीन तसवीर देखकर साहब के आश्चर्य की सीमा न रही। उन्होंने कहा—"टहसोलडार, मैंने टो नक्शा बनाने के लिये कहा था।"

तहसीलदार साहब बोले—'हुजूर, यह नक्शा ही तो है। हमारे मुल्क में ऐसे ही नक्शे तैयार किये जाते हैं।'

मैजि—'अच्छा, इस नक्शे का पैमाना क्या है'—

तहसीलदार साहब इस बेढब सवाल से पहले तो चकराये, लेकिन बाद में जरा सँभल कर जवाब दिया। हुजूर, इसका पैमाना है 'फ़ायलातुन; फ़ायलातुन; फायलात्।' (उर्दू कविता के एक वज़न का माप है)।

मैजिस्ट्रेट ने तहसीलदार साहब को सिर से पैर तक देखा और फिर पूछा—'यह कौन-सा पैमाना है ?'

तहसीलदार साहब—हुजूर, लखनऊ का यह ख़ास शाही पैमाना है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मजिस्ट्रेट भी विलायत से नये ही आये हुए थे, समझे कि मुमकिन है, यह भी कोई 'भवन निर्माण' की माप हो। अस्तु, अपनी अनभिज्ञता छिपाने के लिये पूछा—तो आपके ख़याल में यह पैमाना (माप) ही ठीक होगा ?

तहसीलदार ने जरा अकड़ कर कहा—हुजूर, एक बैरक तो क्या ? हमारे बुज़ुर्गों ने बड़ी-बड़ी इमारतें, हुसैनाबाद, छतर मंजिल, कैसर बाग़ और न जाने क्या-क्या इसी फ़ायलातुन फ़ायलात् के पैमाने पर बनवा डाली हैं।

साहब यह जवाब सुनकर चुप हो रहे। इसी बीच में महल के अन्दर जो ख़बर गई कि दीवानखाने में साहब आया हुआ है तो बेगम साहबा बहुत घबराईं। या खुदा ! मेरे लाड़ले पर यह क्या आफ़त आई ! कहीं तहसीलदारी में 'फेल' तो नहीं हो गया। फ़ाल (शगुन) अच्छा नहीं है।

इतने ही में तहसीलदार महल में आये। बेगम ने उठ कर बलायें लीं, पूछा—"क्या बात थी बेटा ? साहब क्यों आया था ?

तहसीलदार—'यूँ ही कुछ, सरकारी काम के लिये।'

बेगम—ख़ैर, मैं तो समझी कि कुछ...अरे हाँ, इनके जमाने में जो न हो जाये सो थोड़ा है।

कहना नहीं होगा कि उसी वक्त पाँच पैसे की रेवड़ियाँ, कुछ फूल मालायें शेख़ सद्दू के इमामबाड़े में भेज दी गयीं।

Sri Pratap Singh Library Srinagar.
SPS
891.433 R 13 R
12173
CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

H 87
R13R

हिन्दी पुस्तकों के मिलने का एक मात्र स्थान—

बंबई बुकडिपो

१६४ हरिसन रोड, कलकत्ता ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE